

दर्शन दर्पण खण्ड 4

श्री बाल्मीकीय रामायण दिग्दर्शन

(मूल - भाषार्थ सहित)



प्रकाशक :
संस्कृति प्रसार न्यास, उरई
मूल्य : ६/- मात्र

श्री मान्यवर प्रणव पाड़्या जी

सप्रेम भेंट

नाथूराम गुप्त
संस्थापक
संस्कृति प्रसार न्यास

श्री बाल्मीकीय रामायण
दिग्दर्शन

तुलसीकृत से भिन्न कुछ प्रसंग
एवम्
सुभाषित
भाषार्थ सहित



नाथूराम गुप्त

प्रकाशक : संस्कृति प्रसार न्यास

मूल्य - रु. ६/-

प्रकाशन हेतु स्वीकृति प्राप्त
कर प्रकाशित कर सकते हैं।

प्रकाशक –
संस्कृति प्रसार न्यास
खोया मण्डी, उरई (उत्तर प्रदेश)
दूरभाष : (05162) 52069, 51723

प्रतियाँ – 1000

संस्करण – प्रथम

दीपावली २००१

मुद्रक – प्रिण्टआर्ट ऑफसेट, लखनऊ
दूरभाष : 219026

कम्प्यूटर साज सज्जा -
आर. एस. प्रिंटिंग प्रेस, उरई
दूरभाष : (05162) 52965



पापमाचरतां घोरं लोकस्याप्रियमिच्छताम्।
अहमासादितो राज्ञा प्राणान्हन्तुं निशाचर।।

लेखक का परिचय



नाम – नाथूराम गुप्त

जन्म स्थान – उरई उ. प्र.

जन्म तिथि – 7–3– 1923

1933 से 1940 तक आर्यकुमार व्यायामशाला का संचालन

1940 से 1975 तक आर्य समाज, उरई के विभिन्न दायित्वों का निर्वाहन

1942 के आन्दोलन में वांछित, भूमिगत रहे, गिरफ्तार नहीं हुए

1947 से डी.ए.वी. हाईस्कूल एवं आर्यकन्या की प्रबन्ध समिति में

डी.ए.वी. इण्टर कालेज एवं डी.वी. डिग्री कालेज के संस्थापक सदस्य

1955 सं 1958 तक नगर पालिका सदस्य

1962 में विद्या भारती की योजनान्तर्गत सरस्वती शिशु मंदिर प्रारम्भ किया जिसमें आज भी अध्यक्ष पद के दायित्व का निर्वहन

लेखन – 1975 के बन्दी जीवन से प्रारम्भ

श्री नाथूराम गुप्त द्वारा लिखित साहित्य

१. वेद और जीवन पृष्ठ सं. ४६० मूल्य २०/- सजिल्द २२/-
२. उपनिषद् नवनीत पृष्ठ सं. १२८ मूल्य १५/-
३. आरोग्य साधन पृष्ठ सं. १३२ मूल्य १६/-
४. वेदवाणी (दर्शन दर्पण खण्ड १) पृष्ठ सं. ८२ मूल्य १०/-
५. उपनिषद सन्देश (दर्शन दर्पण खण्ड २) पृष्ठ सं. ७३ मूल्य १०/-
६. गीता जीवन दर्शन (दर्शन दर्पण खण्ड ३) पृष्ठ सं. ६६ मूल्य ८/-
७. श्री बाल्मीकीय रामायण दिग्दर्शन (दर्शन दर्पण खण्ड ४)
पृष्ठ सं. ४८ मूल्य ६/-
८. नीति संक्षेप (दर्शन दर्पण खण्ड ५) पृष्ठ सं. ५८ मूल्य ६/-
६. दर्शन दर्पण (सम्पूर्ण पांचों खण्ड एक साथ) पृष्ठ सं. ३०० मूल्य ४०/-

प्रकाशक -

संस्कृति प्रसार न्यास

खोया मण्डी, उरई (उ. प्र.)

दूरभाष : (०५१६२) ५२०६६, ५१७२३

दर्शन दर्पण

प्रेरणा

ऋतं च स्वाध्याय प्रवचने च - तप इति तपोनित्यः पोरुशिष्टिः ।

शास्त्रों के स्वाध्याय से ज्ञान प्राप्त कर उसका प्रवचन, जीवन में धारण कर उसका ज्ञान, क्रिया तथा वाणी द्वारा देना तप है - सर्वोत्तम कार्य है।

तैत्तिरीयोपनिषद की शिक्षा वल्ली के नवम् अनुवाक के पाठ से प्रेरणा प्राप्त हुई, स्वाध्याय द्वारा प्राप्त एवम् स्वानुभूतियों को लिपिबद्ध करने की।

आचार्य श्रीराम जी शर्मा १९६५ से जब भी मैं दर्शनार्थ गया वैदिक वांङ्मय को संक्षिप्त में प्रस्तुत करने हेतु निरन्तर प्रेरित करते रहे, वेद और जीवन को देखकर कहा प्रयास ठीक दिशा में है किन्तु इसमें प्रमुख उपनिषद् आदि सम्मिलित कर ऐसा रूप दें जिससे सामान्य पाठक भी अपने पूर्व-पुरुषों के विशाल ज्ञान भण्डार से कुछ सिकता कण प्राप्त कर सके तथा उत्पन्न हो ऋषियों द्वारा लिखित साहित्य के स्वाध्याय की लालसा।

इसी प्रेरणा ने प्रेरित किया यह संकलन प्रस्तुति करने हेतु, वेद, उपनिषद्, श्रीमद्भग्वद् गीता, श्री बाल्मीकीय रामायण तथा प्रमुख भारतीय नीति ग्रन्थों के सूत्र भाषार्थ सहित प्रस्तुति है, जिससे 'धर्म' वास्तव में जीवन जीने की कला है, इस सत्य को हम पहिचानें तथा आस्थावान हो धर्म के प्रति।

- नाथूराम गुप्त

दर्शन दर्पण

ग्रन्थ संदर्भ (पांचों खण्ड)

प्रथम खण्ड - वेद वाणी

भाषा व्याकरण एवम् भ्रम उत्पादक कारणों की समीक्षा एवम् चारों वेदों के प्रमुख मन्त्र भावार्थ सहित

द्वितीय खण्ड - उपनिषद सन्देश

एकादश उपनिषदों का परिचयात्मक विवेचन, विश्व के मनीषियों के विचार, प्रमुख मंत्र भावार्थ सहित

तृतीय खण्ड - गीता जीवन दर्शन

प्रमुख श्लोक भावार्थ एवं विवेचना सहित

चतुर्थ खण्ड - श्री बाल्मीकीय रामायण दिग्दर्शन

श्री तुलसीकृति से भिन्न कुछ कथानक, प्रेरणादायी कुछ श्लोक, आशय एवं भावार्थ सहित

पंचम खण्ड - नीति संक्षेप

विदुर नीति, कणिक नीति, भ्रातृहरि शतक, चाणक्य नीति के चयनित सूत्र भावार्थ सहित

बन्धुओ इस संकलन का एक ही उद्देश्य है कि वैदिक वांङ्मय (जिसमें जीवन की प्रत्येक समस्या का समाधान है) से अपनी समस्या का समाधान स्वयं प्राप्त करना सीखें।

इन पांचों खण्डों में उद्धृत समस्त श्लोक, मंत्र, सूत्र उन त्यागी तपस्वी वैदिक ऋषियों के ग्रन्थों से संकलित हैं जो पन्थ, सम्प्रदाय की समस्त प्राचीरों का उल्लघंन कर केवल मानव मात्र की हित कामना में निरत रहे, वैदिक वांङ्मय के वास्तविक स्वरूप का भान आपको होगा।

ईसाई मिशनरियों द्वारा हिन्दू धर्मग्रन्थों के अंश विकृति रूप में, हमारी धर्म के प्रति आस्था को समाप्त करने हेतु गलत अर्थ लिखकर कुछ पत्र पत्रिकाओं में धन देकर प्रकाशित करवाये जा रहे हैं।

इस दुष्प्रचार के प्रभाव के निराकरण हेतु यह अति आवश्यक है कि इस संकलन से या किसी धार्मिक ग्रन्थ से २/४ पंक्तियां उसके वास्तविक अर्थ सहित, हमारे सभी प्रकाशक बन्धु अपनी-अपनी पत्रिकाओं के प्रत्येक अंक में प्रकाशित करने का क्रम बनावें।

इस दुष्प्रचार के प्रभाव को समाप्त करना आज नितान्त आवश्यक है अतः मेरा सभी पत्र पत्रिकाओं के प्रकाशक बन्धुओं से करबद्ध निवेदन है कि किसी भी धार्मिक ग्रन्थ से २/४ पंक्तियां अपने प्रत्येक अंक में प्रकाशित कर जन सामान्य को धर्म के प्रति आस्थावान बना पुण्य के भागी बनें।

- नाथूराम गुप्त

अनुक्रमणिका

प्रेरक सूत्र

१. **नृशंसमनृशंसं वा प्रजारक्षणकारणात्।**

पातकं वा सदोषं वा कर्त्तव्यं रक्षता सदा।।

प्रजा की रक्षा के लिए अच्छा या बुरा कर्म, पातक वा अपवाद सहित कर्म को भी करना ही चाहिए।

२. **राज्यभारनियुक्तानामेष धर्मः सनातनः।**

अधर्म्या जहि काकुत्स्थ धर्मो ह्यस्यां न विद्यते।।

दुष्टों का वध राजकार्यों में नियुक्त पुरुषों का सनातन धर्म है। हे राम ! यह ताड़का अधर्मिणी है अतः इसे मार डालो।

३. **नास्तिक्यमनृतं क्रोधं प्रमादं दीर्घसूत्रताम्।**

अदर्शनं ज्ञानवतामालस्यं पञ्चवृत्तिताम्।।

४. **एकचिन्तनमर्थानामनर्थज्ञैश्च मन्त्रणम्।**

निश्चितानामनारम्भं मन्त्रस्यापरिरक्षणम्।।

५. **मङ्गलस्याप्रयोगं च प्रत्युत्थानं च सर्वतः।**

कच्चित्त्वं वर्जयस्येतान् राजदोषांश्चतुदर्श।।

हे भरत ! नास्तिकता, असत्य भाषण, क्रोध, प्रमाद, दीर्घसूत्रता (टालमटोल) सज्जनों से न मिलना, आलस्य, इन्द्रियों की परवशता, मन्त्रियों की अवहेलना कर अकेले ही राज्य, सम्बन्धी बातों पर विचार करना, अशुभ-चिन्तकों अथवा उल्टी बात समझाने वाले मूर्खों से परामर्श करना, निश्चित किये हुए कामों को प्रारम्भ न करना, रहस्यों को प्रकट कर देना, मङ्गल -कृत्यों का त्याग, ? नीच-ऊँच सबको देख उठ खड़े होना अथवा सब शत्रुओं पर एक साथ आक्रमण - इन चौदह राजदोषों को तो तुमने त्याग दिया है न ?

६. पापमाचरतां घोरं लोकस्याप्रियमिच्छताम्।

अहमासादितो राज्ञा प्राणान्हन्तुं निशाचर।।

हे निशाचर ! घोर पापकर्म करने वाले और लोक का अमङ्गल करने वाले पापचारियों के वध के लिए लोकहित हेतु ही मुझे महाराज दशरथ ने वन में भेजा है।

श्री रामचरित्र के अनुकरणीय पात्र

सन्मर्यादा का भान रहे,
हे राम तुम्हारा ध्यान रहे
प्रभु के प्रदत्त इस जीवन में हंसते हंसते सब खेल करें,
सच्चिदानन्द का भान रहे,
हे राम तुम्हारा ध्यान रहे।
कर्त्तव्य न विस्मृति हो अपना समभाव हृदय को सिखलावें
सुख में न कभी अभिमान करें, दुख में न दीनता दिखलावें।।
मुख पर मीठी मुसकान रहे, हे राम तुम्हारा ध्यान रहे
भय तथा प्रलोभन दूर रहें प्राणों की भी परवाह न हो।
तीनों लोकों का राज्य जाय पर आदर्शों का त्याग न हो।।
प्रण पालन का अरमान रहे, हे राम तुम्हारा ध्यान रहे।
दुनिया के सुन्दर उपवन में सब निरख निरखकर हरा भरा।
मन में मस्ती तन में चुस्ती चितवन में हो उत्साह भरा।।
पर भले बुरे का भान रहे, हे राम तुम्हारा ध्यान रहे
चाहे केवट हो वानर हो हम बान्धव सा व्यवहार करें।
यदि मिले विभीषण राक्षस भी तो मित्र बनाकर प्यार करें।
दुर्जनता को आश्रय न मिले, हे राम तुम्हारा ध्यान रहे
अबला अनाथ असहायों पर अत्याचारों को सह न सके।
कामी साम्राटों के प्रचण्ड आतंकवेग में रह न सके।
निश्छल दृढ़ता की वान रहे, हे राम तुम्हारा ध्यान रहे
सेवा अंजनि के नन्दन सी, उत्साह सुमित्रा नन्दन सा।
कैकय नन्दन सा भ्रातृ प्रेम वात्सल्य रहे अजनन्दन सा।
पातिव्रत हो भू नन्दनि सा, हे राम तुम्हारा ध्यान रहे
पुरुषोत्तम का आदर्श रहे रामायण का रसपान रहे।
चमकें जब तक यह सूर्य चन्द्र घर घर प्रभु का गुणगान रहे।
हरि भक्तों सा मन मस्त रहे, हे राम तुम्हारा ध्यान रहे

श्री वाल्मीकीय रामायण दिग्दर्शन

प्राक्कथन

धार्मिक वांङ्मय की जैसी परम्परा है जिज्ञासु द्वारा तत्वदर्शी ऋषियों से अपनी जिज्ञासा के समाधान हेतु प्रश्न करना तथा ऋषि द्वारा उसका समाधान, बाल्मीकीय रामायण का प्रारम्भ भी इसी परिपाटी के अनुसार है-

तपः स्वाध्यायनिरतं तपस्वी वाग्विदां वरम्।

नारदं परिप्रपच्छ वाल्मीकिर्मुनिपुंगवम्।।१।।

तप और स्वाध्याय में निरत, वक्ताओं में चतुर एवं मुनियों में श्रेष्ठ नारदजी ने तपस्वी वाल्मीकि मुनि ने पूछा -

कोन्वस्मिन्सांप्रतं लोके गुणवान्कश्च वीर्यवान्।

धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च सत्यवाक्यो दृढ़व्रतः।।२।।

भगवन् इस समय इस संसार में गुणवान् शूरवीर, धर्मज्ञ कृतज्ञ सत्यवादी और दृढ़ प्रतिज्ञ कौन है ?

चारित्रेण च को युक्तः सर्वभूतेषु को हितः।

विद्वान्कः कः समर्थश्च कश्चैकप्रियदर्शनः।।३।।

सदाचार से युक्त, सब प्राणियों का हित करने वाला, विद्वान सामर्थ्यवान् और प्रिय दर्शन कौन है ?

आत्मवान्को जितक्रोधो द्युतिमान्कोऽनसूयकः।

कस्य विभ्यति देवाश्च जातरोषस्य संयुगे।।४।।

धैर्ययुक्त काम क्रोधादि शत्रुओं का विजेता, कान्तियुक्त, ईर्ष्या तथा निन्दा न करने वाला तथा युद्ध में क्रुद्ध होने पर देवताओं को भी भयभीत करने वाला कौन है ?

इस प्रश्न का उत्तर देते हुये महार्षि नारद ने कहा -

इक्ष्वाकुवंशप्रभवो रामो नाम जनैः श्रुतः।

नियतात्मा महावीर्यो द्युतिमान्धृतिमान्वशी।।५।।

इक्ष्वाकु-वंश में उत्पन्न, राम नाम से लोक में विख्यात श्रीरामचन्द्र नियतस्वभाव (मन को वश में रखने वाले) अतिबलवान् तेजस्वी धैर्यवान् और जितेन्द्रिय हैं।

विविध भांति श्री राम का वर्णन करते हुए कहा 'रामोविग्रह वान धर्मः' अर्थात् श्रीराम धर्म की साक्षात मूर्ति है।

बाल्मीकीय रामायण प्रथम महाकाव्य क्यों।

वेद उपनिषद् ब्राह्मण सूत्रादि सैकड़ों पद्यमय ग्रन्थ रामायण काल के पूर्व लिखे जा चुके थे किन्तु श्री बाल्मीकीय रामायण प्रथम ऐतिहासिक महाकाव्य होने से ही इसको प्रथम काव्य ग्रन्थ तथा श्री बाल्मीकि को विद्वान आदि कवि मानते हैं इसके लेखन काल के सम्बन्ध में मतैक्य नहीं है किन्तु महाभारत तथा पद्म पुराण आदि में इसका उल्लेख होने के कारण पुराण काल से पूर्व इसे लिखे जाने की बात अधिकांश विद्वान स्वीकार करते हैं।

महार्षि वाल्मीकि श्री राम के समकालीन थे जैसा रामायण के निम्न श्लोक से स्पष्ट होता है-

प्राप्तराज्यस्य रामस्य वाल्मीकिर्भगवानृषिः।
चकार चरितं कृत्स्नं विचित्रपदमर्थवत्।।

अर्थात्- श्री राम के राज्य सिंहासन पर आसीन होने के पश्चात महार्षि वाल्मीकि ने विचित्र पदों से युक्त इस काव्य की रचना की।

बाल काण्ड २।२५

मानव समाज हेतु एक अनुकरणीय चरित्र प्रस्तुति करना ऐसा चरित्र जिससे सभी प्रेरणा प्राप्त कर सकें कवि का उद्देश्य था इसी कारण पूर्णरुपेण अकलुष मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम का आदर्श चरित्र उन्होंने चयन किया जो युगों युगों तक एक प्रकाश पुञ्ज के तुल्य मानवता का दिशा दर्शन करेगा।

साहित्य तत्कालीन समाज का दर्पण तो होता ही है साथ ही कवि साहित्यकार अपनी रचनाओं द्वारा समाज में व्याप्ति विकृतियों के परिमार्जन का दायित्व भी निर्वहन करता है इस दायित्व के निर्वहन में जो कवि या उसकी कृति जितने सफल होते हैं उतना ही वह जनमानस में अपना स्थान बनाने में सफल होते हैं।

महार्षि बाल्मीकि ने श्री राम का आदर्श चरित्र प्रस्तुति कर समाज को जो दिशा दी, इसी से हजारों वर्ष व्यतीत होने पर भी महार्षि हम सबके श्रद्धास्पद हैं।

जैसा राष्ट्रकवि श्री मैथिलीशरण जी गुप्त ने साकेत के आवरण पृष्ठ पर उद्घृत किया है :-

श्री राम तुम्हारा चरित स्वयम् ही काव्य है।
कोई कवि बन जाये सहज सम्भाव्य हैं

वास्तव में श्री राम के चरित्र की ही विशेषता है जो डाकू को महाकवि तथा भक्त को भगवान बना देता है। महात्मा गोस्वामी तुलसीदास के काल में विधर्मी

शासन के कारण समाज की दशा अति दयनीय थी धार्मिक-साहित्य मन्दिर तीर्थस्थल आदि सभी श्रद्धा केन्द्रों को नष्ट भ्रष्ट करना समाज में विभेद उत्पन्न कर परस्पर संघर्ष करवाना आस्थाहीनता उत्पन्न करना तथा बलात् धर्म परिवर्तन करना सामान्य बात थी।

उस समय हिन्दू समाज के लिये एक बहुत ही विकट समस्या थी शिव (शिव उपासक) तथा वैष्णवों (श्रीराम कृष्ण के उपासकों) का परस्पर संघर्ष जिस प्रकार आज साम्प्रदायिक दंगे होते हैं उसी प्रकार के खूनी संघर्ष शैव वैष्णवों के बीच होते थे।

इन समस्याओं के समाधान हेतु महात्मा गोस्वामी तुलसी दास जी ने श्रीराम चरित्र का ही चयन किया महार्षि बाल्मीकि के ऐतिहासिक चरित्र चित्रण को एक ऐसा स्वरुप प्रदान किया जिसने समाज में फैल रही अनास्था को आस्था में परिवर्तित कर दिया अपनी मानस में भगवान शिव तथा श्रीराम को इस भांति अन्योन्याश्रित परस्पर आदरवान स्वरुप में प्रस्तुत किया, जिसके प्रभाव से शैव, वैष्णव विरोध लगभग समाप्त हो गया।

अपना उद्देश्य प्राप्त करने में समाज में व्याप्ति विकृतियों के निवारण में जितनी सफलता महात्मा गोस्वामी श्री तुलसीदास जी तथा उनके श्रीरामचरित मानस को प्राप्त हुई है उसकी तुलना में कोई ग्रन्थ नहीं।

राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रसार का भी बहुत बड़ा श्रेय महलों से झोपड़ी तक श्री रामचरित मानस के पाठ को है।

मानव समाज हेतु एक अनुकरणीय आदर्श चरित्र प्रस्तुति करने के साथ साथ समाज में फैली विविध विकृतियों को नष्ट करने की प्रेरणा,धार्मिक विद्वेष मिटाने हेतु विविध प्रसंगों के माध्यम द्वारा शिक्षा, चरित्र निर्माण हेतु प्रेरणा सभी हमें एक ही ग्रन्थ श्री रामचरित मानस से प्राप्त हो जाती है।

कुछ प्रसंग गोस्वामी श्री तुलसीदास ने उस काल में प्रचलित रामायणों के आधार पर प्रस्तुत किये हैं विद्वान अथवा सन्त का कोई वर्णन निराधार नहीं होता, बहुत संभव है कि सम्पूर्ण बाल्मीकीय रामायण महात्मा श्री तुलसीदास को उपलब्ध न हुई हो क्योंकि चार सौ वर्ष पूर्व मुद्रण की सुविधा न होने के कारण बड़े ग्रन्थों का उपलब्ध होना सुगम न था। बड़े बड़े पुस्तकालयों में हस्तलिखित ग्रन्थ तो उपलब्ध थे किन्तु उनका स्वाध्याय वहीं रुककर किया जा सकता था।

इसी कारण बाल्मीकीय के अनेकों प्रसंग मानस में गोस्वामी तुलसीदास जी ने प्रथक भाँति चित्रित किये हैं।

श्री बाल्मीकीय से ऐसे प्रसंगों में से ३/४ प्रसंग विज्ञ पाठकों को ग्रन्थ की शैली एवम् विद्वान् अपनी बात को कैसी सुबोध सरल भाषा में प्रस्तुति करता है इसका दिग्दर्शन करने हेतु संक्षिप्त में प्रस्तुति कर रहा हूँ।

कुछ प्रसंगों का दिग्दर्शन

महार्षि परशुराम का प्रसंग :-

महाराज दशरथ बारात सहित अयोध्या लौट रहे थे, मार्ग में महार्षि परशुराम से भेंट हो गई। महाराज तथा ऋषि मंडली ने अर्घादि दे अभिवादन किया उसे स्वीकार कर महार्षि परशुराम श्रीराम से बोले :-

राम दशरथे वीर वीर्यं ते श्रूयतेऽद्भुतम्।
धनुषो भेदनं चैव निखिलेन मया श्रुतम्।।६।।

हे दशरथ नन्दन वीर! तुम्हारा पराक्रम अद्भुत सुना जाता है। मिथिला में तुमने जो धनुष तोड़ा है वह भी हमने सुना है।

तदद्भुतमचिन्त्यं च भेदनं धनुषस्त्वया।
तत् श्रुत्वाहमनुप्राप्तो धनुर्गृह्य परमं शुभम्।।७।।

उस धनुष का तोड़ा जाना आश्चर्यजनक एवं अचिन्त्य है उसी का वृत्तान्त सुन मैं एक दूसरा धनुष लेकर यहाँ आया हूँ।

तदिदं घोरसङ्काशं जामदग्न्यं महद्धनुः।
पूरयस्व शरेणैव स्वबलं दर्शयस्व च।।८।।

यह भयंकर धनुष जमदग्नि का है (अथवा इसका नाम जामदग्न्य है) इस पर तीर चढ़ाकर आप अपना बल प्रदर्शित करें।

तदहं ते बलं दृष्ट्वा धनुषोऽस्य प्रपूरणे।
द्वन्द्वयुद्धं प्रदास्यामि वीर्यश्लाध्यमहं तव।।६।।

इस धनुष पर तीर चढ़ाने से तुम्हारे बल को जानकर हम उनकी प्रशंसा करेंगे और तुम्हारे साथ द्वन्द्व युद्ध करेंगे।

योजयस्व धनुःश्रेष्ठे शरं परपुरञ्जयम्।
यदि शक्नोषि काकुत्स्थ द्वन्द्वं दास्यामि ते ततः।।१०।।

हे शत्रओं के पुरों को जीतने वाले ! इस धनुष पर बाण चढ़ाइये हे काकुत्स्थ! यदि तुमने इस पर बाण चढ़ा दिया तो मैं तुमसे द्वन्द्व-युद्ध करूँगा।

ऐसा सुन श्रीराम बोले :-

श्रुत्वानसि यत्कर्म कृत्वानसि भार्गव।

अनुरुध्यामहे ब्रह्मन् पितुरानृण्यमास्थितः।।११।।

हे परशुरामजी! आपने जो कर्म किए हैं, वे सब मैं सुन चुका हूं। आपने अपने पिता के मारने वालों से जो बदला लिया है वह भी मुझे ज्ञात है।

वीर्यहीनभिवाशक्तं क्षत्रधर्मेण भार्गव।

अवजानासि मे तेजः पश्य मेऽघ पराक्रमम्।।१२।।

परन्तु आप जो यह समझते हैं कि हम वीर्यहीन हैं हममें क्षात्रधर्म का अभाव है यह ठीक नहीं है। आज आप मेरा पराक्रम देखिए।

इत्युक्त्वा राघवः क्रुद्धो भार्गवस्य शरासनम्।

शरं च प्रतिजग्राह हस्ताल्लघुपराक्रमः।।१३।।

ऐसा कह और क्रुद्ध हो पराक्रमी राम ने परशुराम के हाथ से धनुष और वाण खींच लिया।

आरोप्य सधनू रामः शरं सज्यं चकार ह।

जामदग्न्यं ततो रामं रामः क्रुद्धोऽब्रवीदिदम्।।१४।।

श्री राम ने उस पर वाण चढ़ा कर और धनुष को खेंच कर क्रुद्ध हो परशुराम से कहा -

ब्राह्मणोऽसीति पूज्यो मे विश्वामित्रकृतेन च।

तस्तमाच्छक्तो न ते राम मोक्तुं प्राणहरंशरशाम्।।१५।।

हे भार्गव ! एक तो आप ब्राह्मण होने के नाते मेरे पूज्य हैं, दूसरे आप विश्वामित्र जी के सम्बन्धी (विश्वामित्रजी की बहन के पौत्र) हैं, अतः इस बाण को आपके ऊपर छोड़कर मैं आपके प्राण तो लेना नहीं चाहता।

इमां वा त्वद्गतिं राम तपोबलसमर्जितान्।

लोकानप्रतिमान्वापि हनिष्यामीति मे मतिः।।१६।।

किन्तु इस बाण से या तो आपकी गति को (अर्थात् लङ्गड़ा करके चलने फिरने की शक्ति को) अथवा बल और तप द्वारा प्राप्त आपकी कीर्ति को नष्ट करूँगा! आप जो चाहें वही किया जाये।

तेजोऽभिहतवीर्यत्वाज्जामदग्न्यो जड़ीकृतः।

रामं कमलपत्राक्षं मन्दं मन्दमुवाच ह।।१७।।

श्रीराम के तेज के समक्ष जब परशुराम जी जड़ के समान वीर्यहीन हो गये तब वे कमलनेत्र राम से धीरे-धीरे कहने लगे।

लोकास्त्वप्रतिमा राम निर्जितास्तपसा मया।

जहि ताञ्छरमुख्येन मा भूत्कालस्य पर्ययः।।१८।।

हे राम ! हमने तप द्वारा जो कीर्ति और यश प्राप्त किया है उसको इस बाण से समाप्त कर दीजिए। जल्दी कीजिए इस कार्य में विलम्ब न हो।

स हतान्दृश्य रामेण स्वाँल्लोकाँस्तपसार्जितान्।

ततः प्रदक्षिणीकृत्य जगामात्मगतिं प्रभुः।।१९।।

परशुराम तप से अर्जित अपने यश और कीर्ति को राम द्वारा विनष्ट देखकर, उनकी प्रदक्षिणा कर अपने स्थान को चले गये।

नागपाश का प्रसंग

मेघनाद द्वारा नागपास के समान शरबन्ध से श्रीराम लक्ष्मण को अचेत कर सीता को दिखाना तथा श्रीगरुण का उनको स्वस्थ करना :-

अदृश्यः सर्वभूतानां कूटयोधी निशाचरः।

बबन्ध शरबन्धेन भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ।।२०।।

तत्पश्चात् उस कपट योद्धा इन्द्रजित् ने चालाकी से अपने आपको सभी सैनिकों की दृष्टि से ओझल रखते हुए दोनों भाई राम और लक्ष्मण को शर-बन्ध से बाँध दिया।

ततो मर्मसु मज्जयन्निशिताञ्शरान्।

रामलक्ष्मणयोर्वीरो ननाद च मुहुर्मुहुः।।२१।।

फिर मर्मस्थलों को जानने वाले इन्द्रजित् ने राम और लक्ष्मण के मर्मस्थलों में पैने पैने बाण मार कर बार बार विजय गर्जना की।

तौ संप्रचलितौ वीरौ मर्मभेदेन कर्शितौ।

निपेततुर्महेष्वासौ जगत्यां जगतीपती।। २२।।

मर्मस्थलों के बिंध जाने से व्याकुल होकर महाधनुर्धारी तथा पृथिवीपालक श्रीराम और लक्ष्मण पृथिवी पर गिर पड़े।

राघवौ पतितौ दृष्ट्वा शरजालसमावृतौ।

बभूवर्व्यथिताः सर्वे वानराः सविभीषणाः।।२३।।

श्रीराम और लक्ष्मण को शरजाल में फँसा हुआ देख विभीषण-सहित समस्त वानर अत्यन्त दुःखी हुए।

रामलक्ष्मणयोर्दृष्ट्वा शरीरे सायकैश्चिते।

सर्वाणि चाङ्गोपाङ्गानि सुग्रीवं भयमाविशत्।।२४।।

श्रीराम और लक्ष्मण के समस्त अंङ्गों और प्रत्यङ्गों को बाणों से विद्ध देखकर सुग्रीव भी बहुत डरे।

तमुवाच परित्रस्तं वानरेन्द्रं विभीषणः।

सबाष्पवदनं दीनं शोकव्याकुललोचनम्।।२५।।

तब भय से संत्रस्त, शोक से व्याकुल नेत्र वाले, आँसुओं से भरपूर मुख वाले, अत्यन्त दीन एवं उदास वानरराज सुग्रीव से विभीषण ने कहा-

अलं त्रासेन सुग्रीव वाष्पवेगो निगृह्यताम्।

एवं प्रायाणि युद्धानि विजयो नास्ति नैष्ठिकः।।२६।।

हे सुग्रीव! डरो मत, रोना धोना बन्द करो। इस प्रकार के युद्धों में किसी एक की विजय निश्चित नहीं होती।

सशेषभाग्यताऽस्माकं यदि वीर भविष्यति।

मोहमतौ प्रहास्येते महात्मानौ महाबलौ।।२७।।

हे वीर! यदि हम लोगों का कुछ भी सौभाग्य शेष होगा तो ये दोनों महाबलवान् महात्मा मूर्छा त्यागकर उठ बैठेंगे।

न कालः कपिराजन्द्र वैक्लव्यमनुवर्तितुम।

तस्मादुत्सृज्य वैक्लंव्यं सर्वकार्यविनाशम्।।२८।।

हे वानरराज ! यह समय कायरता दिखाने का नहीं है अतः तुम सब कार्यों को नष्ट करने वाली कायरता को त्याग दो।

ततः पुष्पकमारोप्य सीतां त्रिजटया सह।

जग्मुर्दर्शयितुं तस्यै राक्षस्यो रामलक्ष्मणौ।।२९।।

तत्पश्चात् त्रिजटा सहित सीता को पुष्पक विमान में बैठा वे राक्षसी सीता को राम-लक्ष्मण का दर्शन कराने के लिये ले चलीं।

विमानेनापि गत्वा तु सीता त्रिजटया सह।

ददर्श वानराणां तु सर्वं सैन्यं निपातितम्।।३०।।

त्रिजटा सहित पुष्पक विमान में बैठी हुई सीता ने युद्ध भूमि में जाकर देखा

कि वानरों की प्रायः सब सेना मार डाली गई है।

ततः सीता ददर्शोभौ श्यानौ शरतल्पयोः।

लक्ष्मणं चापि रामं च विसंज्ञौ शरपीडितौ।।३१।।

तत्पश्चात् सीता ने देखा कि राम और लक्ष्मण दोनों भाई शरशय्या पर पड़े सो रहे है। वे वीर संज्ञाहीन = बेहोश हैं और बाणों से पीड़ित हैं।

परिदेवयमानां तां राक्षसी त्रिजटाब्रवीत्।

मा विषादं कृथा देवि भर्ताऽयं तव जीवति।।३२।।

तब विलाप करती हुई सीता से त्रिजटा राक्षसी ने कहा - तुम दुःखी मत होओ। तुम्हारे पति मरे नहीं, जीवित हैं।

हतवीरप्रधाना हि हतोत्साहा निरुद्यमा।

सेना भ्रमति संख्येषु हतकर्णेव नौर्जले।।३३।।

जिस सेना का प्रमुख वीर मारा जाता है उस सेना का उत्साह समाप्त हो जाता है, सैनिक उद्यमहीन हो जाते है। नायक विहीन सेना युद्धभूमि में ऐसे डगमगाने लगती है, जैसे नाविक रहित नाव जल में डगमगाने लगती है।

इयं पुनरसंभ्रान्ता निरुद्विग्ना तपस्विनी।

सेना रक्षति काकुत्स्थौ मया प्रीत्या निवेदितौ।।३४।।

हे तपस्विनी ! यह सेना उद्वेग-रहित होकर, सावधानता-पूर्वक राम-लक्ष्मण की रक्षा कर रही है इसीलिए मैंने तुमसे स्नेहपूर्वक यह निवेदन किया है कि ये दोनों जीवित हैं।

गरुण वैद्य द्वारा राम-लक्ष्मण का स्वस्थ होना-

घोरेण शरबन्धेन बद्धौ दशरथात्मजौ।

निःश्वसन्तौ यथा नागौ श्यानौ रुधिरोक्षितौ।।३५।।

घोर बाण-बन्धन में बँधे हुए और सर्प की भाँति फुंकारते हुए दोनों दशरथ-पुत्र रक्त से लथपथ पड़े हुये थे।

सर्वे ते वानरश्रेष्ठाः ससुग्रीवमहाबलाः।

परिवार्य महात्मानौ तस्थुः शोकपरिप्लुंताः।।३६।।

महाबली सुग्रीव प्रमुख वानरश्रेष्ठों-सहित उन दोनों वीरों को चारों ओर से घेरकर उनकी रक्षा कर रहे थे और शोक में डूबे हुए थे।

एतस्मिन्नन्तरे रामः प्रत्यबुध्यत वीर्यवान्।

स्थिरत्वात्सत्त्वयोगाच्च शरैः सन्दानितोऽपि सन्।।३७।।

इतने ही में वीर्यवान् तथा दृढ़गात्र और बल-सम्पन्न श्रीराम नागपाश में जकड़े हुए होने पर भी सचेत हुए।

ततो दृष्ट्वा सरुधिरं विषण्णं गाढमर्पितम्।

भ्रातरं दीनवदनं पर्यदेवयदातुरः।।३८।।

उठते ही रुधिर से तर, दीन-वदन और बाणों से जकड़े हुए अपने भाई लक्ष्मण को देखकर वे आतुर हो रोने लगे-

किं न मे सीतया कार्यं किं कार्य जीवितेन वा।

शयानं योऽद्य पश्यामि भ्रातरं युधि निर्जितम्।।३९।।

जब मैं अपने भाई को युद्ध में पराजित हो अचेत पड़ा देख रहा हूँ तब मैं सीता को लेकर क्या करूँगा और स्वयं जीवित रहकर भी क्या करूँगा ?

एतस्मिन् काले गरुडं वैनतेयं महाबलम्।

वानरा ददृशुः सर्वे ज्वलन्तमिव पावकम्।।४०।।

थोड़ी ही देर में अग्नि के समान देदीप्यमान विनता पुत्र वैद्यराज गरुड़ को वानरों ने वहाँ उपस्थित देखा।

ततः सुपर्णः काकुत्स्थौ दृष्ट्वा प्रत्यभिनन्दितः।

विममर्श च पाणिभ्यां मुखे चन्द्रसमप्रभे।।४१।।

वैद्यराज गरुण ने उन दोनों राजकुमारों को देख उनका अभिनन्दन किया। फिर उनके अङ्गों का अपने हाथ से स्पर्श कर उन दोनों के चन्द्रतुल्य मुखों को सहलाया।

वैनतेयेन संस्पृष्टास्तयोः संरुरुहुर्व्रणाः।

सुवर्णे च तनू स्निग्धे तयोराशु वभूवतुः।।४२।।

गरुड़ जी के स्पर्श से उन दोनों के घाव भर गये तथा उन दोनों के शरीर पहले के समान सुन्दर रंग वाले और चिकने हो गये।

तावुत्थाप्य महावीर्यो गरुडो वासवोपमौ।

उभौ तौ सस्वजे हृष्टौ रामश्चैनमुवाच ह।।४३।।

फिर इन्द्र के समान महाबलवान् दोनों भाइयों को उठाकर और अत्यन्त प्रसन्न होकर गरुड़ जी ने उन्हें अपने गले लगाया। तब श्रीराम ने उनसे कहा- हे महात्मन्-

भवत्प्रसादाद्व्यसनं रावणिप्रभवं महत्।

आवामिह व्यतिक्रान्तौ पूर्ववद्बलिनौ कृतौ।।४४।।

आपके अनुग्रह से हम मेघनाद द्वारा उत्पन्न की हुई घोर विपत्ति से छूट गये हैं और आपके प्रयत्न से हमारे शरीरों में पहले जैसा ही बल पराक्रम आ गया है।

यथा तातं दशरथं यथऽजं च पितामहम्।

तथा भवन्तमासाद्य हृदयं मे प्रसीदति।।४५।।

इस समय आपको देखकर मुझे वैसी ही प्रसन्नता हो रही है जैसी कि पितामह महाराज अज और पिता महाराज दशरथ से मिलकर होती।

को भवान् रुपसम्पन्नो दिव्यस्रगनुलेपनः।

वसानो विरजे वस्त्रे दिव्याभरणभूषितः।।४६।।

रूपसम्पन्न, दिव्य पुष्पमाला धारण किये हुए तथा सुगन्धित चन्दनादि लगाये हुए निर्मल वस्त्र धारण किये हुये और आभूषणों से अलंकृत आप कौन हैं ?

तमुवाच महातेजा वैनतेयो महाबलः।

अहं सखा ते काकुत्स्थ प्रियः प्राणो बहिश्चरः।।४७।।

राम के ऐसा पूछने पर महातेजस्वी एवं महाबलवान् विनता पुत्र गरुडजी ने कहा हे काकुत्स्थ ! मैं तुम्हारा बाहर विचरने वाले प्राण के समान प्रिय मित्र हूँ।

इमं श्रुत्वा तु वृत्तान्तं त्वरमाणोऽहमागतः।

सहसा युवयोः स्नेहात्सखित्वमनुपालयन्।।४८।।

मैं तुम लागों के पाशबद्ध होने के वृत्तान्त को सुनकर तुम दोनों के प्रति स्नेह होने के कारण अपने मित्रधर्म का पालन करने के लिए दौड़ा हुआ यहाँ आया हूँ।

मोक्षितौ च महाघोरादस्मात्सायकबन्धनात्।

अप्रमादश्च कर्तव्यो युवाभ्यां नित्यमेव हि।।४९।।

मैंने आपको इस महादारुण बाण बन्धन से मुक्त कर दिया है। अब आप लोगों को प्रमाद-रहित होकर, सदा ही अत्यन्त सावधानी के साथ युद्ध-सम्बन्धी कार्य करना चाहिए।

एवमुक्त्वा ततो रामं परिष्वज्य च वीर्यवान्।

जगामाकाशमाविश्य सुपर्णः पवनो यथा।।५०।।

राम से ऐसा कहकर और उनका आलिंगन करके महापराक्रमी गरुड़ वायु

के समान वेग से आकाश मार्ग से चले गये।

विरुजो राघवौ दृष्ट्वा ततो वानरयूथपाः।

सिंहनादांस्तदा नेदुर्मृदाश्चाप्यनादयन्।।51।।

श्रीराम और लक्ष्मण को नीरोग एवं स्वस्थ देखकर वानर-यूथपति सिंहनाद करने लगे और मृदङ्गों को बजाने लगे।

लक्ष्मण शक्ति प्रसंग

मेघनाद द्वारा श्रीराम लक्ष्मण तथा समस्त वानर सेना को मृतप्राय करना तथा श्री जामवन्त की आज्ञा से पवनतनय का बूटी लाकर सबको स्वस्थ करना-

ततः पावकसङ्काशैः सरैराशीविषोपमैः।

वानराणामनीकानि विभेद समरे प्रभुः।।52।।

इस प्रकार युद्ध करते हुए इन्द्रजित ने अग्नि की भाँति प्रज्वलित और विषधर सर्प की भाँति भयंकर बाणों से रणभूमि में वानरी सेना को वेध डाला।

अष्टादशशरस्तीक्ष्णैः स विदूध्वा गन्धमादनम्।

विव्याध नवभिश्चैव नलं दूरादवस्थितम्।।53।।

मेघनाद ने गन्धमादन को अट्ठारह बाणों से बींधकर, दूर खड़े नल को भी नौ बाणों से बींध डाला।

सप्तभिस्तु महावीर्यो मैन्दं मर्मविदारणैः।

पञ्चभिर्विशिखैश्चैव गजं विव्याध संयुगे।।54।।

मैन्द के भी सात बाण मारकर उसके मर्मस्थलों को विदीर्ण कर डाला। इसी प्रकार उस युद्ध में इन्द्रजित ने पाँच पैने बाण मारकर गज नामक वानर को भी घायल कर डाला।

जाम्बवन्तं तु दशभिः नीलं त्रिशद्भिरेव च।

सुग्रीवमृषभं चैव सोऽङ्गदं द्विविदं तथा।।55।।

अन्यानपि तथा मुख्यान् वानरान् बहुभिः शरैः।

अर्दयामास संक्रुद्धः कालाग्निरिव मूर्च्छितः।।56।।

अत्यन्त कुपित हो कालाग्नि के समान क्रोधित मेघनाद ने जाम्बवान् को दस और नील को तीस बाण मारकर तथा सुग्रीव, ऋषभ अद और द्विविद को तथा अन्य प्रधान वानरयूथपतियों को बहुत से बाण मार-मार व्याकुल कर डाला।

ववर्ष रामं शरवृष्टिजालैः
सलक्ष्मणं भास्कररश्मिकल्पैः।
ततस्तु ताविन्द्रजिदस्त्रजालैः।
वभूवतुस्तत्र तथा विशस्तौ।।५७।।

वानरयूथपतियों को घायल करने के पश्चात् इन्द्रजित ने राम और लक्ष्मण पर सूर्य की किरणों के समान चमकते हुए बाणों की वृष्टि की। इन्द्रजित को उस शरवृष्टि से वे दोनों भाई मृतक के समान हो गये।

तयोस्तदा सादितयो रणाग्रे
मुमोह सैन्यं हरिपुङ्गवानाम्।
सुग्रीवनीलाङ्गदजाम्बवन्तः
न चापि किञ्चित्प्रतिपेदिरे ते।।५८।।

श्रीराम और लक्ष्मण के इस प्रकार मूर्छित हो जाने पर वानरयूथपतियों की सेना भी किंकर्तव्यविमूढ़ हो गई। यहाँ तक कि सुग्रीव, नील अङ्गद और जाम्बवान जैसे प्रधान वानर भी यह न समझ पाये कि क्या किया जाए।

ततो विषण्णं समवेक्ष्य सैन्यं
विभीषणो बुद्धिमतां वरिष्ठः।
उवाच शाखामृगराजवीरान्
मा भैष्ट नास्त्यत्र विषादकालः।।५९।।

उस समय बुद्धिमानों में श्रेष्ठ विभीषण ने वानरसेना को विषाद में पड़े हुए देखकर सुग्रीव आदि वानरों को धैर्य प्रदान करते हुए कहा- भाइयो ! डरो मत। यह समय दुःखी होने का नही है।

विभीषणवचः श्रुत्वा हनुमांस्तमथाब्रवीत्।
एतस्मिन्निहते सैन्ये वानराणां तरस्विनाम्।
यो यो धारयते प्राणंस्तं तमाश्वासयावहै।६०।।

विभीषण के इन वचनों को सुनकर हनुमान् बोले वीर वानरों की इस घायल प्रताड़ित सेना में जो जो वानर अभी जीवित हैं, आओ हम लोग चलकर उन्हें धैर्य प्रदान करें।

तावुभौ युगपद्वीरौ हनुमद्राक्षसोत्तमौ।
उल्काहस्तौ तदा रात्रौ रणशीर्षेविचेरतुः।।६१।।

ऐसा निश्चय कर वे दोनों वीर हनुमान और विभीषण मिलकर और हाथों में मशाल लेकर रात्रि में रणभूमि में घूमने लगे।

सागरौघनिभं भीमं दृष्ट्वा बाणार्दितं बलम्।

मार्गते जाम्बवन्तं स्म हनुमान् सविभीषणः।।६२।।

समुद्र के समान अपार वानर-सेना को बाणों से मथित देख विभीषण और हनुमान् जाम्बवान् को खोजने लगे।

स्वभावजरया युक्तं वृद्धं शरशतैश्चितम्।

प्रजापतिसुतं वीरं शाम्यन्तमियव पावकम्।।६३।।

दृष्ट्वा तमुपसङ्गम्य पौलस्त्यो वाक्यमब्रतीत्।

कश्चिदार्यशरैस्तीक्ष्णैः प्राणा न ध्वंसितास्तव।।६४।।

स्वाभाविक धैर्यादि से तथा जरा अवस्था से युक्त, ज्ञान से वृद्ध और सैकड़ों बाणों से आहत अतएव बुझी हुई अग्नि के समान प्रजापति के पुत्र जाम्बवान् को देख और उनके समीप जा विभीषण ने कहा- हे आर्य ! इस दारुण बाण-वर्षा से तुम्हारे प्राणों का तो संहार नहीं हुआ ?

विभीषणवचः श्रुत्वा जाम्बवानृक्षपुङ्गवः।

कृच्छादभ्युद्गिरन् वाक्यमिदं वचनब्रवीत्।।६५।।

ऋक्षश्रेष्ठ जाम्बवान् विभीषण के वचन सुन, बड़ी कठिनाई से और कराहते हुए ये वचन बोले -

नैर्ऋतेन्द्र महावीर्य स्वरेण त्वाऽभिलक्षये।

पीड्यमानः शितैर्बाणैर्न त्वां पश्यामि चक्षुषा।।६६।।

हे राक्षसेन्द्र ! हे महाबली ! मैं तुम्हें तुम्हारे कण्ठस्वर से पहचान सका हूं। (मैं मरा तो नहीं परन्तु) पैने बाणों से मेरा शरीर ऐसा बिंधा हुआ है कि मैं आंखों से तुम्हें देख भी नहीं सकता।

अञ्जना सुप्रजा येन मातरिश्वा च सुव्रत।

हनुमान् वानरश्रेष्ठः प्राणान धारयते क्वचित्।।६७।।

हे सुव्रत! जिनको प्राप्त कर अञ्जना पुत्रवती हुई है और पवनदेव सुपुत्रवान् हुए हैं वे वानर श्रेष्ठ हनुमान् तो जीवित हैं ?

श्रुत्वा जाम्बवतो वाक्यमुवाचेदं विभीषणः।

आर्यपुत्रावतिक्रम्य कस्मात्पृच्छसि मारुतिम्।।६८।।

जाम्बवान् की यह बात सुनकर विभीषण बोले- आपने राजकुमारों की कुशल मङ्गल न पूछकर सबसे पहले हनुमान्जी की कुशलता के विषय में पूछा है इसका क्या कारण है ?

नैव राजनि सुग्रीवे नाङ्गदे नापि राघवे।

आर्य सन्दर्शितः स्नेहो यथा वायुसुते परः।।६९।।

हे आर्य ! आपने जैसा स्नेह हनुमान्जी के प्रति प्रकट किया है ऐसा स्नेह आपने न तो कपिराज सुग्रीव के सम्बन्ध में प्रकट किया, न अङ्गद और न राम लक्ष्मण के प्रति - इसका कारण क्या है ?

विभीषणवचः श्रुत्वा जाम्बवान् वाक्यमब्रवीत्।

श्रृणु नैर्ऋतशार्दूल यस्मात्पृछामि मारुतिम्।।७०।।

विभीषण की बात सुनकर जाम्बवान ने कहा हे राक्षसराज! मैंने सबसे पूर्व हनुमान् का कुशल समाचार क्यों पूछा - इसका कारण बताता हूँ, सुनो-

तस्मिन् जीवति वीरे तु हतमप्यहतं बलम्।

हनुमत्युज्झितप्राणे जीवन्तोऽपि वयं हताः।।७१।।

यदि हनुमान् जीवित हैं तो सारी सेना मारी जाकर भी जीवित ही है और यदि हनुमान् जी मर गये तो हम सब जीते हुए भी मरे ही हुए हैं।

धरते मारुतिस्तात मारुतप्रतिमो यदि।

वैश्वानरसमो वीर्ये जीविताशा ततो भवेत्।।७२।।

यदि पवन के समान वेगवान् और अग्नि के समान बलवान् हनुमान् जीवित हैं तो मुझे मरे हुओं के भी जीवित होने की आशा है।

ततो वृद्धमुपागम्य नियमेनाभ्यवादयत्।

गृह्य जाम्बवतः पादौ हनुमान् मारुतात्मजः।।७३।।

जाम्बवान् की इन बातों को सुनकर पवनपुत्र हनुमान् वृद्ध जाम्बवान् के पास गये और उनके दोनों चरण पकड़ नियमानुसार (अपना नाम लेकर) उनको प्रणाम किया।

श्रुत्वा हनुमतो वाक्यं तदा वव्यिथितेन्द्रियः।

पुनर्जातमिवात्मानं मन्यते स्मर्क्षपुङ्गवः।।७४।।

उस समय घावों से अत्यन्त व्याकुल होने पर भी ऋक्षश्रेष्ठ जाम्बवान् ने हनुमान के वचनों को सुनकर अपना पुनर्जन्म हुआ माना।

ततोऽब्रवीन्महातेजा हनुमन्तं स जाम्बवान्।

आगच्छ हरिशार्दूल वानरांस्त्रातुमर्हसि।।७५।।

तत्पश्चात् परमतेजस्वी जाम्बवान् ने हनुमान् जी से कहा - हे वानरशार्दूल! आओ और वानरों के प्राण बचाओ।

गत्वा परममध्वानमुपर्युपरि सागरम्।

हिमवन्तं नगश्रेष्ठं हनुमन् गन्तुमर्हसि।।७६।।

हे हनुमन् ! तुम समुद्र के ऊपर ही ऊपर आकाश में बहुत लम्बा मार्ग तै करके पर्वतश्रेष्ठ हिमालय पर जाओ।

ततः काञ्चनमत्युच्चमृषभं पर्वतोत्तमम्।

कैलासशिखरं चापि द्रक्ष्यस्यरिनिषूदन।।७७।।

हे शत्रुसंहारक! हिमालय से आगे तुम्हें स्वर्णमय और बहुत ऊँचा ऋषभ नामक पर्वतश्रेष्ठ दिखाई देगा, वहीं से तुम्हें कैलाश पर्वत की चोटी भी दिखाई पड़ेगी।

तस्य वानरशार्दूल चतस्त्रो मूर्ध्नि सम्भवाः।

द्रक्ष्यस्योषधयो दीप्ता दीपयन्तो दिशो दश।।७८।।

हे वानरकेसरी ! उस पर्वत-शिखर पर तुम्हें चार अत्यन्त चमकीली बूटियाँ- जिनकी चमक से दशों दिशाएं प्रकाशित रहती हैं - दिखाई देंगी।

मृतसञ्जीवनीं चैव विशल्यकरणीमपि।

सावर्ण्यकरणीं चैव सन्धानकरणीं तथा।।७६।।

उन चारों के नाम हैं १. मृतसंञ्जीवनी, २. विशल्यकरणी, ३. सावर्ण्यकरणीं और ४. सन्धानकरणी।

ताः सर्वा हनुमन् गृह्य क्षिप्रमागन्तुमर्हसि।

आश्वासय हरीन् प्राणैर्योज्य गन्धवहात्मज।।८०।।

हे हनुमान् ! इन चारों औषधियों को लेकर तुम शीघ्र यहाँ लौट आओ। हे पवनपुत्र ! इन औषधियों को लाकर तुम वानरों के प्राणों को बचाकर इन्हें आश्वासन प्रदान करो।

श्रुत्वा जाम्बवतो वाक्यं हनुमान् हरिपुङ्गवः।

आदित्यपथमाश्रित्य जगाम स गतक्लमः।।८१।।

जाम्बवान के इन वचनों को सुन वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌जी ने बड़ी तेजी के साथ आकाशमार्ग से गमन कर (पर्वतशिखर पर पहुँचे)।

स तस्यशृङ्गं सनगं सनागं

स काञ्चनं धातुसहस्त्रजुष्टम्।

विकीर्णकूटज्वलिताग्रसानुं

प्रगृह्य वेगात् सहसोन्ममाथ।।८२।।

(जब हनुमान् उन औषधियों को नहीं पहचान पाये) तब उन्होंने उस प्रदेश के समस्त चमकने वाले पौधों तथा पौधों पर चढ़ने वाली बेलों को पकड़ा और जोर से झटका देकर स्वर्णिम पत्र पुष्पों एवं जड़ों सहित उखाड़ लिया।

स तं समुत्पाट्य खमुत्पपात

जगाम वेगाद् गरुडोग्रवेगः।

तं वानराः प्रेक्ष्य विनेदुरुच्चैः

स तानपि प्रेक्ष्य मुदा ननाद।।८३।।

इस प्रकार उस प्रदेश के समस्त औषधि खण्ड को उखाड़कर हनुमान्‌जी आकाश में जा पहुंचे और गरुण के समान तीव्र वेग से लंका की ओर चले। जब ये उड़ते हुए लंका के समीप पहुँचे तब इन्हें देखकर वानरों ने बड़े जोर से गर्जना की। हनुमान् ने भी उन वानरों को देख हर्षित होकर सिंहनाद किया।

तावप्युभौ मानुषराजपुत्रौ

तं गन्धमाघ्राय महौषधीनाम्।

बभूवतुस्तत्र तदा विशल्या-

वुत्तस्थुरान्ये च हरिप्रवीराः।।८४।।

उन दिव्य औषधियों की गन्ध सूँघने से उन दोनों राजपुत्रों - राम और लक्ष्मण के तथा अन्य वानर-वीरों के घाव भर गये और वे सभी उठ बैठे।

भ्रमित करने हेतु बनावटी सीता के वध का प्रसंग

मेघनाद का भयभीत हो युद्ध से पलायन तथा बनावटी सीता को युद्ध भूमि में लाकर हत्या करना :-

विज्ञाय तु मनस्तस्य राघवस्य महात्मनः।

स निवृत्याहवात्तस्मात् संविवेश पुरं ततः।।८५।।

महात्मा श्री राम के मन की बात ताड़कर (अर्थात् राम मेरे वध के लिये कोई अमोघ अस्त्र छोड़ेंगे) इन्द्रजित् झटपट युद्ध बन्दकर लंका में घुस गया।

इन्द्रजित्तु ततो दृष्ट्वा भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ।

रणायाभ्युद्यतौ वीरौ मायां प्रादुष्करोत्तदा।।८६।।

बाहर निकलकर जब उसने राम और लक्ष्मण को लड़ने के लिए उद्यत देखा (तब इनसे जीतना कठिन है - ऐसा सोचकर) उसने एक माया रची अर्थात् एक चाल चली।

इन्द्रजित्तु रथे स्थाप्य सीतां मायामयीं ततः।

बलेन महताऽऽवृत्य तस्या वधमरोचयत्।।८७।।

उस माया=चाल के अनुसार इन्द्रजित ने एक बनावटी सीता को रथ में बिठाया और उस रथ को राक्षसी सेना से घिरवा कर उस बनावटी सीता के वध का निश्चय किया।

मोहनार्थं तु सर्वेषां बुद्धिं कृत्वा दुर्मतिः।

हन्तुं सीतां व्यवसितो वानराभिमुखो ययौ।।८८।।

वह दुर्बुद्धि शत्रु पक्ष=रामदल को धोखा देने के लिए ही ऐसा विचार कर उस मायामयी सीता का वध करने के लिए वानरों के सम्मुख पहुँचा।

तं दृष्ट्वा त्वभिनिर्यान्तं नगर्याः काननौकसः।

उत्पेतुरभिसंक्रुद्धाः शिलाहस्ता युयुत्सवः।।८९।।

उसे लङ्का से बाहर निकलता हुआ देख, वानरगण क्रोध में भर और शिलाएँ हाथ में लिये हुए लड़ने की इच्छा से कूदते हुए आगे बढ़े।

तद्वानरबलं दृष्ट्वा रावणिः क्रोधमूर्छितः।

कृत्वा विकोशं निस्त्रिंशं मूर्ध्नि सीतां परामृशत्।।९०।।

अपने ऊपर आक्रमण के लिए तैयार उस वानरसेना को देखकर इन्द्रजित् क्रोध से पागल हो गया और म्यान से तलवार खेंचकर सीताजी के केशों को पकड़ लिया।

तां स्त्रियं पश्यतां तेषां ताडयामास रावणिः।

क्रोशन्तीं राम रामेति मायया योजितां रथे।।९१।।

इन्द्रजित् उन वानरों के सामने ही उस हा राम! हा राम!! कहकर रोती-चिल्लाती और रथ पर बैठी बनावटी सीता को मारने लगा।

गृहीतमूर्धजां दृष्ट्वा रामस्य महिषीं प्रियाम्।

अब्रवीत्परुषं वाक्यं हनुमान् रावणात्मजम्।।६२।।

श्री राम की प्राणप्रिया सीता के जूड़े को खींचा जाता देख क्रोध में भर हनुमान्‌जी रावणात्मज मेघनाद से कठोर वचन बोले-

ब्रह्मर्षीणां कुले जातो राक्षसीं योनिमाश्रितः।

धिक्त्वां पापसमाचारं यस्य ते मतिरीदृशी।।६३।।

ब्रह्मर्षिकुल में उत्पन्न होकर भी तू राक्षसयोनि में उत्पन्न होने वालों के से कर्म कर रहा है, ऐसे पापाचारी, नीच बुद्धि वाले तुझको धिक्कार है। ऐसा सुन मेघनाद बोला -

न हन्तव्याः स्त्रियश्चेति यद् ब्रवीषि प्लवङ्गम।

पीडाकरममित्राणां यत्स्यात् कर्तव्यमेव तत्।।६४।।

हे वानर! जो तू कहता है कि स्त्री वध नहीं करना चाहिए उसके सम्बन्ध में मेरा यही कहना है कि जिस कार्य के करने से शत्रु को दुःख हो, वह कार्य अवश्य ही करना चाहिए।

तमेवमुक्त्वा रुदतीं सीतां मायामयीं तदा।

शितधारेण खड्गेन निजघानेन्द्रजित्स्वयम्।।६५।।

ऐसा कहकर इन्द्रिजित् ने स्वयं तीखी धार वाली तलवार से रोती हुई नकली सीता को काट डाला।

हनुमान् कदनं चक्रे रक्षसां भीमकर्मणाम्।

स निवार्य परानीकमब्रवीत्तान् वनौकसः।।६६।।

इस युद्ध में हनुमानजी ने क्रूरकर्मा राक्षसों का भीषण संहार किया। शत्रुसैन्य को भगाकर हनुमान्‌जी ने वानरों से कहा- चलो, अब वापस लौट चलें।

यन्निमित्तं हि युध्यामो हता सा जनकात्मजा।

इममर्थं हि विज्ञाप्य रामं सुग्रीवमेव च।।६७।।

तौ यत्प्रतिविधास्येते तत् करिष्यामहे वयम्।

इत्युक्त्वा वानरश्रेष्ठो वारयन् सर्ववानरान्।।६८।।

"जिनके लिए हम लड़ रहे थे, वे जनकनन्दिनी ही मारी गई। चलो, अब यह संवाद श्रीराम और सुग्रीव को कह सुनाएँ फिर वे जैसा कहेंगे वैसा किया जायेगा।"

हनुमान् हरिसैन्येन सन्निकर्ष महायशाः।

शीघ्रमागम्य रामाय दुःखितो वाक्यमब्रवीत्।।६९।।

महायशस्वी हनुमान्जी समस्त वानरसेना को लिये हुए तुरन्त श्रीराम के पास पहुँचे और दुःखी होकर कहने लगे -

समरे युद्ध्यमानानामस्माकं प्रेक्षतां पुरः।

जघान रुदतीं सीतामिन्द्रजिद्रावणात्मजः।।१००।।

भगवन् ! युद्धभूमि में लड़ते समय, हम लोगों की आँखों के सामने रावण के पुत्र इन्द्रजित ने रोती हुई सीता को मार डाला।

उद्भ्रान्तचित्तस्तां दृष्ट्वा विषण्णोऽहमरिन्दम।

तदहं भवतो वृत्तं विज्ञापयितुमागतः।।१०१।।

हे शत्रुनाशक ! उस सीता वधरूपी कार्य को देख मेरा चित्त पागल सा हो गया है और मैं दुःखी हो उस वृत्तान्त को आपकी सेवा में निवेदन करने आया हूँ।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा राघवः शोकमूर्च्छितः।

निपपात तदा भूमौ छिन्नमूल इव द्रुमः।।१०२।।

हनुमान् के मुख से सीता के वध का समाचार सुनकर राम शोक से मूर्छित हो, जड़ से कटे वृक्ष की भाँति धड़ाम से भूमि पर गिर पड़े।

तं भूमौ देवसङ्काशं पतितं प्रेक्ष्य राघवम्।

अभिपेतुः समुत्पत्य सर्वतः कपिसोत्तमाः।।१०३।।

देवतुल्य श्रीराम को भूमि पर गिरते देख प्रधान-प्रधान वानर चारों ओर से भागे और उन्हें घेरकर खड़े हो गये।

तं लक्ष्मणोऽथ बाहुभ्यां परिष्वज्य सुदुःखितः।

उवाच राममस्वस्थं वाक्यं हेत्वार्थसंयुतम्।।१०४।।

इतने में अत्यन्त दुःखी लक्ष्मण ने श्रीराम को अपनी दोनों भुजाओं में भर गले से लगाया और फिर शोक से पीड़ित राम से यह युक्तियुक्त वचन बोले -

अद्य तु विपुलं वीर दुःखमिन्द्रजिता कृतम।

कर्मणा व्यपनेष्यामि तस्मादुत्तिकिष्ठ राघव।।१०५।।

हे वीर ! निश्चय ही इन्द्रजित् ने बड़ा दुःखदायी काम कर डाला है परन्तु मैं अपने पुरुषार्थ से इस दुःख को दूर कर दूँगा। अतः हे राघव ! अब आप उठिए।

राममाश्वासमाने तु लक्ष्मणे भ्रतृवत्सले।

निक्षिप्य गुंल्मान् स्वस्थाने तत्रागच्छद्विभीषणः।।१०६।।

भ्रातृवत्सल लक्ष्मण जी श्रीराम को समझा ही रहे थे कि इतने में विभीषण सेनाओं को अपने अपने मोर्चों पर नियत कर वहाँ पहुंचे।

व्रीडितं शोकसन्तप्तं दृष्ट्वा रामं विभीषणः।

अन्तर्दुःखेन दीनात्मा किमेतदिति सोऽब्रवीत्।।१०७।।

श्री राम को लज्जित और शोकसन्तप्त देख विभीषण ने अन्तर्वेदना से व्याकुल और उदास होकर पूछा - यह क्या बात है ?

विभीषणमुखं दृष्ट्वा सुग्रीवं तांश्च वानरान्।

लक्ष्मणोवाच मन्दार्थमिदं वाष्पपरिप्लुतः।।१०८।।

तब लक्ष्मण जी ने विभीषण, सुग्रीव तथा अन्य वानरों की ओर देख और आँसू भरकर थोड़े शब्दों में कहा-

हतामिन्द्रजिता सीतामिह श्रुत्वैव राघवः।

हनुमद्वचनात् सौम्य ततो मोहमुपागतः।।१०९।।

हे सौम्य ! हनुमान के मुख से इन्द्रजित द्वारा सीता के वध का समाचार सुनकर श्रीराम मूर्च्छित हो गये हैं।

कथयन्तं तु सौमित्रिं सन्निवार्य विभीषणः।

पुष्कलार्थमिदं वाक्यं विसंज्ञं राममब्रवीत्।।११०।।

लक्ष्मण जी यह बात कह ही रहे थे कि विभीषण उन्हें बीच में ही रोककर चेतनाशून्य श्रीराम से यह पक्की और सच्ची बात कहने लगे-

मनुजेन्द्रार्तरूपेण यदुक्तं च हनुमता।

तदयुक्तमहं मन्ये सागरस्येव शोषणम्।।१११।।

हे नरेन्द्र ! हनुमान् जी ने दुःखी होकर आपसे जो बात कही है मैं उसे उसी प्रकार अनहोनी और असम्भव मानता हूँ जैसे कोई कह दे कि समुद्र सूख गया।

अभिप्रायं तु जानामि रावणस्य दुरात्मनः।

सीतां प्रति महाबाहो न च घातं करिष्यति।।११२।।

हे महाबाहो ! मैं सीता के विषय में दुरात्मा रावण के अभिप्राय को भली-भाँति जानता हूँ वह सीता का वध कभी नहीं करेगा। (किसी दूसरे को करने भी नहीं देगा।)

याच्यमानस्तु बहुशो मया हितचिकीर्षुणा।

वैदेहीमुत्सृजस्वेति न च तत् कृतवान् वचः।।११३।।

मैंने रावण की हितकामना से उससे अनेक बार प्रार्थना की कि सीता को छोड़ दीजिये, परन्तु उसने मेरी बात नहीं मानी।

वानरान् मोहयित्वा तु प्रतियातः स राक्षसः।

चैत्यं निकुम्भिलां नाम यत्र होमं करिष्यति।।११४।।

इन्द्रजित् ने वानरों को धोखा देने के लिए बनावटी सीता का वध किया है। बनावटी सीता के वध द्वारा वानरों को भ्रम में डाल वह निकुम्भिला देवी के मन्दिर में बैठकर हवन करेगा।

ससैन्यस्तत्र गच्छामो यावत्तन्न समाप्यते।

त्यजैनं नरशार्दूल मिथ्यासन्तापमागतम!।।११५।।

उसका हवन समाप्त होने से पूर्व ही ससैन्य हमें वहाँ पहुँच जाना चाहिए। हे नरशार्दूल ! आप इस वृथा सन्ताप को त्याग दीजिए।

ततो धैर्यमवष्टभ्य रामः परपुरञ्जयः।

लक्ष्मणं कीर्तिसम्पन्नमिदं वचनब्रवीत्।।११६।।

विभीषण के इन वचनों को सुनकर शत्रु के पुरों को जीतने वाले श्री राम धैर्य धारणकर कीर्तियुक्त लक्ष्मण जी से बोले -

यद्वानरेद्रस्य बलं तेन सर्वेण संवृतः।

हनुमत्प्रमुखश्चैव यूथपैः सहलक्ष्मणः।।११७।।

जाम्बवेनर्क्षपतिना सह सैन्येन संवृतः।

जहि तं राक्षससुतं मायाबलविशारदम्।।११८।।

तुम कपिराज की समस्त सेना को तथा हनुमानादि प्रमुख यूथपतियों को और ऋक्षों की सेना सहित जाम्बवान् को अपने साथ लेकर जाओ और उस मायावी रावणात्मज इन्द्रजित् को मारो।

संकलन के आकार बढ़ जाने के भय से, इस तेईस हजार से अधिक श्लोकों वाले वृहदाकार ग्रन्थ के प्रसंगों पर थोड़ा थोड़ा विचार करना भी शक्य नहीं है, विज्ञ पाठकों को शैली आदि से परिचित कराने हेतु चार प्रसंग संक्षिप्त में यहाँ प्रस्तुति किये है। जिससे विज्ञ पाठकों में इसके प्रति रुचि उत्पन्न हो तथा इस रसमय आदर्श जीवन चरित्र का स्वाध्याय करें जीवन को आदर्शोन्मुख आनन्द मय बनाने हेतु।

विश्व साहित्य में जितने विशालकाय ऐतिहासिक ग्रन्थ हैं वाल्मीकीय रामायण

(जिसकी श्लोक संख्या तेईस हजार से अधिक है) ही एक मात्र ऐसा ग्रन्थ है जिसके अनुवाद अन्य भाषाओं में प्रकाशित हुये हैं अपने देश के तो सभी विद्वान इसकी शैली तथा आदर्श चरित्र चित्रण पर मुग्ध हैं ही अनेकों विदेशी विद्वान भी इसे साहित्य की अनुपम धरोहर मानते हैं गुरुवर श्री रवीन्द्रनाथ जी टैगोर लिखते हैं :-

वाल्मीकीय रामायण आलोचना प्रत्यालोचना के ऊपर का ग्रन्थ है यह लोक विस्मय कारक क्षातृ धर्म का एक अनन्त जीवन्त वाङ्गमय है क्षात्रोचित कार्य वीरोचित स्पर्धा सैनिकोचित सफलता तथा मनुष्योचित उत्कर्ष के विवरण तो सम्भ्रान्त मानवीयता के महतो महीयान् अनुपमेय हैं।

वाल्मीकीय रामायण के अंग्रेजी अनुवादक मिस्टर ग्रिफ्रिथ साहब अपनी इसी ग्रन्थ के अनुवाद की भूमिका में लिखते हैं :-

संसार में काव्य ग्रन्थों की कमी नहीं है परन्तु आचरण की पवित्रता का बाल्मीकीय रामायण में जिस दृढ़ता मनोहरता और रसिकता के साथ निर्वहन हुआ है वैसा अन्यत्र कहीं उपलब्ध नहीं, काव्य जगत में यही एक ऐसा ग्रन्थ है जो मानव हृदय में सौन्दर्य पूर्ण शैली से सत्यप्रेम उत्पन्न करने की शक्ति रखता है।

इसके अध्ययन से हम अनुभव करते हैं कि हमारे अन्दर उच्च विचार प्रविष्ठ हो रहे हैं हम कुछ से कुछ बनते जा रहे हैं इसके पाठ से मानवता तथा श्रेष्ठता को समलंकृत करने वाली सम्पूर्ण गुणराशि हमारे सामने आ खड़ी होती है प्रभावोत्पादक शैली में मानव समाज को धार्मिक शिक्षा प्रदान करना तो रामायण का मुख्य उद्देश्य है।

मानव जीवन के प्रत्येक पहलू पर कवि ने प्रकाश डाला है वह भी बड़ी मनमोहक शैली में सारांश यह कि रामायण प्रत्येक समय प्रत्येक के लिये वह किसी जाति या देश का वासी हो अनुकरणीय चरित्र एवम् विद्या की वस्तु है।

श्री वाल्मीकीय रामायण के विषय में लगभग इसी प्रकार के विचार सभी देशी विदेशी विद्वानों के हैं सबका आशय है ऐसा अनुकरणीय आदर्श चरित्र विश्व इतिहास में दूसरा नहीं है।

- नाथूराम गुप्त

वाल्मीकीय रामायण

सुभाषित
(बालकाण्ड)

अयोध्या के नागरिक

तस्मिन्पुरवरे हृष्टा धर्मात्मात्मानो बहुश्रुताः।
नरास्तुष्टा धनैः स्वैः स्वैरलुब्धाः सत्यवादिनः।।१।।

उस पुरी में सब मनुष्य प्रसन्न, धर्मात्मा, बहुप्रसिद्ध, अपने अपने धन से सन्तुष्ट, निर्लोभ और सत्यवादी थे।

कामी वा न कदर्यो वा नृशंसः पुरुषः क्वचित्।
द्रष्टुं शक्यमयोध्यायां ना विद्वान्न च नास्तिकः।।२।।

अयोध्यापुरी में कोई भी मनुष्य कामी, कंजूस निर्दयी, मूर्ख और नास्तिक नहीं था।

नानाहिताग्निर्नायज्वा न क्षुद्रो वा न तस्करः।
कश्चिदासीदयोध्यायां न चावृत्तो न सङ्करः।।३।।

अयोध्या में कोई मनुष्य नास्तिक, असत्यवादी, अल्पश्रुत, परनिन्दक, अशिक्षित, असमर्थ तथा यज्ञ न करने वाला एवम् चोर या वर्णशंकर नहीं था।

नास्तिको नानृती वापि न कश्चिदबहुश्रुतः।
नासूयको न चाशक्तो नाविद्वान्विद्यते क्वचित्।।४।।

अयोध्यापुरी में कोई व्यक्ति नास्तिक, असत्यवादी, अल्पश्रुत, परनिन्दक, असमर्थ या अशिक्षित नहीं था।

राज्यमन्त्री

विद्याविनीता ह्रीमन्तः कुशला नियतेन्द्रियाः।
श्रीमन्तश्च महात्मानः शास्त्रज्ञा दृढ़विक्रमाः।।५।।

ये सब मन्त्री विद्या-विनय-सम्पन्न, लज्जा वाले, कार्यकुशल, शास्त्र के जानने वाले और बड़े पराक्रमी थे।

कुशला व्यवहारेषु सौहृदेषु परीक्षिताः।
प्राप्तकालं यथादण्डं धारयेयुः सुतेष्वपि।।६।।

वे सब व्यवहार कुशल, अपने विभागों की पूर्ण जानकारी रखने वाले और अन्याय करने पर अपने पुत्रों को भी दण्ड देने वाले थे।

जनहितार्थ

पाप कहे जाने वाले कर्म भी करणीय

नृशंसमनृशंसं वा प्रजारक्षणकारणात्।

पातकं वा सदोषं वा कर्त्तव्यं रक्षता सदा।।७।।

प्रजा की रक्षा के लिए अच्छा या बुरा कर्म, पातक वा अपवाद सहित कर्म को भी करना ही चाहिए।

राज्यभारनियुक्तानामेष धर्मः सनातनः।

अधर्म्या जहि काकुत्स्थ धर्मो ह्यस्यां न विद्यते।।८।।

दुष्टों का वध राजकार्यों में नियुक्त पुरुषों का सनातन धर्म है। हे राम ! यह ताड़का अधर्मिणी है अतः इसे मार डालो।

(अयोध्याकाण्ड)

भाग्य के भरोसे कौन

विक्लवो वीर्यहीनो यः स दैवमनुवर्तते।

वीराः सम्भावितात्मानो न दैवं पर्युपासते।।९।।

जो पौरुषहीन और कायर पुरुष है वही भाग्य का भरोसा करता है, वीर और धीर पुरुष दैव के भरोसे नहीं बैठे रहते।

पत्नी ही पति के भाग्य की सहभागिनी

आर्यपुत्र पिता माता भ्राता पुत्रस्तथा स्नुषा।

स्वानि पुण्यानि भुञ्जानाः स्वं स्वं भाग्यमुपासते।।१०।।

भर्तुर्भाग्यं तु भार्येका प्राप्नोति पुरुषर्षभ।

अतश्चैवाहमादिष्टा बने वस्तव्यमित्यपि।।११।।

हे आर्यपुत्र ! पिता, माता, भ्राता, पुत्र तथा पुत्रवधू- ये सब अपने अपने पुण्यों का भोग करते हुए अपने अपने कृतकर्मानुकूल सुख दुःख प्राप्त करते हैं परन्तु हे नरकेसरी ! पति के भाग्य की एक स्त्री (अर्द्धाङ्गिनी होने के कारण) ही भोगती है। इसलिए आपके वन जाने के आदेश के साथ मुझे भी वन जाने की आज्ञा मिल गई।

शोक मनुष्य का शत्रु

शोको नाशयते धैर्य शोको नाशयते श्रुतम।

शोको नाशयते सर्व नास्ति शोकसमो रिपुः।।१२।।

शोक मनुष्य के धैर्य को नष्ट कर देता है, शोक सर्वनाश कर देता है शोक से बढ़कर मनुष्य का और कोई शत्रु नहीं है।

कर्मफल अवश्यम्भावी

यदाचरति कल्याणि शुभं वा यदि वाऽशुभम्।

तदेव लभते भद्रे कर्ता कर्मजमात्मनः।।१३।।

हे कल्याणि ! मनुष्य अच्छा या बुरा - जैसा भी कर्म करता है उस भले या बुरे कर्म का फल कर्ता को अवश्य मिलता है।

अराजक देश में

नाराजके जनपदे धनवन्तः सुरक्षिताः।

शेरते विवृतद्वाराः कृषिगोरक्षजीविनः।।१४।।

अराजक राष्ट्र में कृषक और गौओं की रक्षा करने वाले तथा धनवान् लोग सुरक्षित नहीं रहते। वे लोग अपने घर के द्वार खोलकर सुख से सो भी नहीं सकते।

नाराजके जनपदे वणिजो दूरगामिनः।

गच्छन्ति क्षेममध्वानं बहुपण्यसमाचिताः।।१५।।

अराजक जनपद में दूर देश मे व्यापार करने वाले वणिक लोग बहुत सा माल लेकर, निर्भय होकर यात्रा नहीं करते।

नाराजके जनपदे चरत्येकचरो वशी।

भावयन्नात्मनात्मानं यत्रसायंगृहो मुनिः।।१६।।

अराजक देश में एकाकी विचरण करने वाला, आत्मा को परमात्मा में लगाने वाला मुनि सन्ध्याकाल होने पर जहाँ चाहे वहाँ डेरा नहीं डाल सकता। सायंकाल होने पर उसे भी किसी सुरक्षित स्थान पर निवास करना पड़ता है।

नाराजके जनपदे स्वकं भवति कस्यचित्।

मत्स्या इव नरा नित्यं भक्षयन्ति परस्परम्।।१७।।

अराजक देश में कोई किसी का नही होता। जैसे बड़ी मछली छोटी मछली को निगल जाती है उसी प्रकार लोग एक दूसरे को मार कर खा जाते हैं।

ये हि सम्भिन्नमर्यादा नास्तिकाश्छिन्नसंशयाः।

तेऽपि भावाय कल्पन्ते राजदण्डनिपीडिताः।।१८।।

जो लोग वर्णाश्रम- धर्म की मर्यादा को तिलाञ्जलि देकर नास्तिक हो जाते हैं परन्तु राजदण्ड के भय से दबे रहते हैं वे भी अराजक देश में राजदण्ड के भय से निर्भय हो फलने फूलने लगते हैं।

शासक हेतु नीति-वचन

(चित्रकूट में श्रीराम द्वारा भरत को उपदेश)

कच्चित्त्वां नावजानन्ति याजकाः पतितं यथा।

उग्रप्रतिग्रहीतारं कामयानमिव स्त्रियः।।१९।।

जिस प्रकार स्त्रियाँ, पर-स्त्रीगामी पतित पुरुष का तिरस्कार करती हैं अथवा जिस प्रकार याजक लोग यज्ञ कर्म से हीन व्यक्ति का अनादर करते हैं उसी प्रकार कही अधिक कर लेने से प्रजा तुम्हारा अनादर तो नहीं करती ?

बलवन्तश्च कच्चित्ते मुख्या युद्धविशारदाः।

दृष्टापदाना विक्रान्तास्त्वया सत्कृत्य मानिताः।।२०।।

तुम्हारी सेना में जो अत्यन्त बलवान् युद्धविद्या में निपुण, सुपरीक्षित और पराक्रमी सैनिक हैं तुम उन्हें पुरस्कृत कर सम्मानित करते हो या नहीं ?

आयस्ते विपुलः कच्चित्कच्चिद्दल्पतरो व्ययः।

अपात्रेषु न ते कच्चित्कोशो गच्छति राघव।।२१।।

हे राघव ! तुम्हारी आय अधिक और व्यय न्यून है न ? तुम्हारे कोष का धन अपात्रों =नाच-गाने वालो में तो नहीं लुटाया जाता ?

कच्चिदर्थेन वा धर्ममर्थ धर्मेण वा पुनः।

उभौ वा प्रतिलोभेन कामेन च न बाधसे।।२२।।

तुम धर्मानुष्ठान के समय को अर्थोपार्जन में अथवा अर्थोपार्जन के समय धर्मानुष्ठान में तो नष्ट नहीं कर देते ? अथवा सुखाभिलाषा के लिए कामवासना में फँस अर्थोपार्जन और धर्मानुष्ठान दोनों का समय तो नहीं गँवा देते ?

राजदोष

नास्तिक्यमनृतं क्रोधं प्रमादं दीर्घसूत्रताम्।

अदर्शनं ज्ञानवतामालस्यं पञ्चवृत्तिताम्।। २३।।

एकचिन्तनमर्थानामनर्थज्ञैश्च मन्त्रणम्।

निश्चितानामनारम्भं मन्त्रस्यापरिरक्षणम्।।२४।।

मङ्गलस्याप्रयोगं च प्रत्युत्थानं च सर्वतः।

कच्चित्त्वं वर्जयस्येतान् राजदोषांश्चतुदर्श।।२५।।

हे भरत ! नास्तिकता, असत्य भाषण, क्रोध, प्रमाद, दीर्घसूत्रता (टालमटोल) सज्जनों से न मिलना, आलस्य, इन्द्रियों की परवशता, मन्त्रियों की अवहेलना कर अकेले ही राज्य, सम्बन्धी बातों पर विचार करना, अशुभ-चिन्तकों अथवा उल्टी बात समझाने वाले मूर्खों से परामर्श करना, निश्चित किये हुए कामों को प्रारम्भ न करना, रहस्यों को प्रकट कर देना, मङ्गल -कृत्यों का त्याग, ? नीच-ऊँच सबको देख उठ खड़े होना अथवा सब शत्रुओं पर एक साथ आक्रमण - इन चौदह राजदोषों को तो तुमने त्याग दिया है न ?

कर्म भोग हेतु मनुष्य स्वतन्त्र नहीं

नात्मनः कामकारोऽस्ति पुरुषोऽयमनीश्वरः।

इतरश्चेतरश्चैनं कृतान्तः परिकर्षति।।२६।।

हे भरत ! अपने सुख-दुःख भोग के लिए मनुष्य स्वतन्त्र नहीं है। यह पुरुष परतन्त्र है। कर्मों का यथायोग्य फल देने के लिए परमात्मा इसे इधर से उधर खेंचता हुआ नाना नाच नचाया करता है।

संयोग वियोग उत्थान पतन निश्चित

सर्वे क्षयान्ता निश्चयाः पतनान्ताः समुच्छ्रयाः।

संयोगाविप्रयोगान्ता मरणान्तं च जीवतिम्।।२७।।

सभी संग्रहीत वस्तुओं का नाश अवश्यम्भावी है, उन्नति-शील जीव का पतन भी अपरिहार्य है। संयोग का अन्त वियोग है, जीवन क पश्चात् मृत्यु भी निश्चित है।

गृहस्थाश्रम सर्वश्रेष्ठ

चतुर्णामाश्रमाणां हि गार्हस्थ्यं श्रेष्ठमाश्रमम्।

प्राहुर्धर्मज्ञ धर्मज्ञास्तं कथं त्युक्तुमर्हसि।।२८।।

हे धर्मज्ञ ! धर्मज्ञ लोग चारों आश्रमों में (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यास) गृहस्थाश्रम को सर्वोत्तम बतलाते हैं। फिर इस सर्वोत्तम आश्रम को आप क्यों छोड़ना चाहते हैं ?

चरित्र ही व्यक्ति का दर्पण

कुलीनमकुलीनं वा वीरं पुरुषमानिनम्।

चारित्रमेव व्याख्याति शुचिं वा यदि वाऽशुचिम्।।२६।।

यह कुलीन है या अकुलीन, वीर है अथवा भीरु, पवित्र है अथवा अपवित्र- इस बात का निर्णय चरित्र ही करता है।

सत्यवादी को प्राप्त

भूमिः कीर्तिर्यशो लक्ष्मीः पुरुषं प्रार्थयन्ति हि।

स्वर्गस्थं चानुपश्यन्ति सत्यमेव भजेत् ततः।।३०।।

राज्य, कीर्ति, यश और लक्ष्मी ही नहीं अपितु स्वर्ग भी सत्यवादी पुरुष की ही याचना करते हैं और उसके पीछे दौड़े चले आते हैं अतः मनुष्य को सदा सत्य बोलना चाहिए।

सज्जन धर्म

सत्यं च धर्मं च पराक्रमं च

भूतानुकम्पां प्रियवादितां च

द्विजातिदेवातिथिपूजनं च

पन्थानमाहुस्त्रिदिवस्य सन्तः।।३१।।

हे जाबालि ! सत्यभाषण, धर्मपालन समय पर पराक्रम प्रदर्शन, प्राणिमात्र पर दया मधुर भाषण, ब्राह्मण, विद्वान और अतिथियों का सत्कार- इन कर्मों को सज्जनों ने स्वर्ग =सुख शान्ति का मार्ग बतलाया है।

धर्मे रताः सत्पुरुषैः समेताः

तेजस्विनो दानगुणप्रधानाः

अहिंसका वीतमलाश्च लोके

भवन्ति पूज्या मुनयः प्रधानाः।।३२।।

जो सदा धर्मानुष्ठान में तत्पर रहते हैं, जो सत्पुरुषों की संगति करने वाले हैं, जो तेजस्वी है, जो दान देने में अग्रसर होते हैं जो गुण-गरिमा से युक्त होते हैं, जो अहिंसक और पापरहित होते हैं- ऐसे मुनि लोग ही इस संसार में पूजनीय होते हैं।

(अरण्यकाण्ड)

पापी लोकनिन्दित अल्पायु

न चिरं पापकर्माणः क्रूरा लोकजुगुप्सिताः।

ऐश्वर्यं प्राप्त तिष्ठन्ति शीर्णमूला इस द्रुमाः।।३३।।

पापी क्रूर और लोकनिन्दित मनुष्य ऐश्वर्य पाकर भी अधिककाल तक जीवित नहीं रह सकते जैसे गली सड़ी जड़ वाले वृक्ष बहुत देर तक नहीं ठहरते।

किये का फल अवश्यंभावी

अवश्यं लभते जन्तुः फलं पापस्य कर्मणः।

घोरं पर्यागते काले द्रुमाः पुष्पमिवार्तवम्।।३४।।

जैसे ऋतु के आने पर वृक्ष स्वयं पुष्पित हो जाते हैं ठीक उसी प्रकार समय आने पर जीवों को उनके किये पापकर्मो का घोर फल अवश्य प्राप्त होता है।

श्रीराम वनवास का हेतु निशाचर वध

पापमाचरतां घोरं लोकस्याप्रियमिच्छताम्।

अहमासादितो राज्ञा प्राणान्हन्तुं निशाचर।।३५।।

हे निशाचर ! घोर पापकर्म करने वाले और लोक का अमङ्गल करने वाले पापचारियों के वध के लिए लोकहित हेतु ही मुझे महाराज दशरथ ने वन में भेजा है।

कालवश व्यक्ति का ज्ञान लुप्त

कालपाशपरिक्षिप्ता भवन्ति पुरुषा हि ये।

कार्याकार्य न जानन्ति ते निरस्तषडिन्द्रयाः।।३६।।

कालपाश में बँधे हुए मनुष्य को कर्तव्या-कर्तव्य का ज्ञान नहीं रहता क्योंकि उसकी अन्तःकरण आदि छहों इन्द्रियों की शक्ति नष्ट हो जाती है।

आलोचक हितकारी

सुलभाः पुरुषा राजन् सततं प्रियवादिनः।

अप्रियस्य तु पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः।।३७।।

हे राजन ! संसार में निरन्तर प्रिय बोलने वाले लोग सदा सुलभ हैं परन्तु कहने में अप्रिय किन्तु वास्तव में हितकारी वचनों के कहने और सुनने वाले लोग संसार में दुर्लभ हैं।

श्रीराममूर्तिमान धर्म है

रामो विग्रहवान् धर्मः साधुः सत्यपराक्रमः।

राजा सर्वस्य लोकस्य देवानां मघवानिव।।३८।।

राम धर्म की साक्षात् मूर्ति हैं, वह साधु-स्वभाव और सत्यपराक्रमी हैं। जिस प्रकार इन्द्र देवताओं के राजा हैं। उसी प्रकार राम सम्पूर्ण लोक के स्वामी हैं।

(किष्किन्धाकाण्ड)

श्री लक्ष्मण का केवलनूपुर पहिचानना

एवमुक्तस्तु रामेण लक्ष्मणो वाक्यमब्रवीत्।

नाहं जानामि केयूरे नाहं जानामि कुण्डले।

नूपुरे त्वभिजानामि नित्यं पादाभिवन्दनात्।।३९।।

श्रीराम के ऐसा कहने पर लक्ष्मणजी बोले - मैं कंकणों = बाजूबन्दों को नहीं जानता और कान के कुण्डलों को भी नहीं पहचानता। हाँ इन नूपुरों = बिछुओं को अवश्य ही पहचानता हूँ ये निश्चित रुप से सीताजी के हैं क्योंकि प्रतिदिन उनकी चरणवन्दना के समय मैं इन्हें देखा करता था।

विशेष :- यह है आर्यवर्त की प्राचीन संस्कृति का आदर्श चरित्र ! लक्ष्मण जी तेरह वर्ष तक वनों में सीताजी के साथ रहे परन्तु उन्होंने कभी आँख उठाकर सीता जी की ओर देखा भी नहीं।

राजा में अपेक्षित गुण

नयश्च विनयश्चोभौ यस्मिन् सत्यं च सुस्थितम्।

विक्रमश्च यथा दृष्टः स राजा देशकालवित्।।४०।।

नीति, नम्रता, स्थिरता, सत्य और पराक्रम जिसमें विद्यमान हो, जो देश-कालविद् हो, वही राजा होने योग्य है। भरत में ये सभी गुण विद्यमान हैं।

किसे प्राण दण्ड उचित

औसरीं भगिनीं वापि भार्या वऽप्यनुजस्य यः।

प्रचरेत नरः कामात्तस्य दण्डो वधः स्मृतः।।४१।।

जो कोई सहोदरा भगिनी अथवा अपने छोटे भाई की स्त्री के साथ धर्मनिन्दित कामुकता का व्यवहार करता है उसके लिए प्राणदण्ड उचित दण्ड बतलाया गया है।

कर्मफल मृत्यु के बाद भी अवश्यंभावी

गुणदोषकृतं जन्तुः स्वकर्म फलहेतुकम्।

अव्यग्रस्तदवाप्नोति सर्व प्रेत्य शुभाशुभम्।।४२।।

प्राणी अपने किये हुए अच्छे या बुरे कर्मों का फल अथवा दुःख मरने के पश्चात् भी भोगते हैं।

जीवन मरण निश्चित

जानास्यनियतामेवं भूतानामागतिं गतिम्।

तस्माच्छुभं हि कर्तव्यं पण्तिनेह लौकिकम्।।४३।।

प्राणियों का जीवन मरण निश्चित है इस बात को जानते हुए बुद्धिमान् को चाहिए कि वह सदा उत्तम कर्म ही करे।

आश्वासन भंग अधमता

अर्थिनामुपपन्नानां पूर्व चाप्युकारिणाम्।

आशां संश्रुत्य यो हन्ति स लोके पुरुषाधमः।।४४।।

जो मनुष्य बल-पौरुष युक्त एवं पूर्व-उपकारी व्यक्तियों को प्रतिज्ञापूर्वक आश्वासन देकर उसे भंग करता है वह संसार में अधम पुरुष माना जाता है।

मदिरापान से सर्वनाश

न हि धर्मार्थसिद्ध्यर्थ पानमेवं प्रशस्यते।

पानादर्थश्च धर्मश्च कामश्च परिहीयते।।४५।।

धर्म-अर्थ की सिध्दि के लिए मद्यपान हितकारी नहीं है बल्कि मादक वस्तु के प्रयोग से मनुष्य के धर्म-अर्थ और कर्म सभी नष्ट हो जाते हैं।

प्रत्युपकार न करना अधर्म

धर्मलोपो महांस्तावत्कृते ह्यप्रतिकुर्वतः।

अर्थलोपश्च मित्रस्य नाशे गुणवतो महान्।।४६।।

उपकारी के उपकार का यदि प्रत्युपकार न किया जाए तो महान् अधर्म होता है। गुणवान मित्र के साथ यदि विरोध हो गया या मैत्री टूट गई तो इससे अर्थनाश होता है - बड़ी भारी हानि होती है।

शासक को करणीय (सुभाषित)

धर्ममर्थ च कामं च काले यस्तु निषेवते।

विभज्य सततं वीर स राजा हरिसत्तम।।४७।।

हे कपिश्रेष्ठ ! तो राजा अपने समय का विभाग कर धर्म-अर्थ और काम सम्बन्धी कार्य करता है वही राजा राज्य करने योग्य होता है।

हित्वा धर्मं तथार्थं च कामं यस्तु निषेवते।

स वृक्षाग्रे यथा सुप्तः पतितः प्रतिबुध्यते।।४८।।

जो राजा धर्म और अर्थ का परित्याग कर केवल काम का ही सेवन करता है वह वृक्ष की डाली पर सोने वाले उस पुरुष के समान है जो गिरने के पश्चात् ही उसके कटु परिणाम को समझता है।

अमित्राणां वधे युक्तो मित्राणां संग्रहे रतः।

त्रिवर्गफलभोक्ता तु राजा धर्मेण युज्यते।।४६।।

जो राजा शत्रु के वध में तत्पर और मित्रों के संग्रह में कटिबद्ध रहता है वह राजा धर्म-अर्थ एवं काम रूपी त्रिवर्ग को भोगता है और धर्माधिकारी कहलाता है।

विषाद से निस्तेजिता

विषादोऽयं प्रसहते विक्रमे पर्युपस्थिते।

तेजसा तस्य हीनस्य पुरुषार्थो न सिध्यति।।५०।।

उद्योग करने अथवा पराक्रम दिखाने के समय जो व्यक्ति विषाद करता है वह तेजहीन हो जाता है और उसका कार्य भी सिद्ध नहीं होता।

(सुन्दर काण्ड)

भोगी शासक राष्ट्र नष्ट का कारण

अकृतात्मानमासाद्य राजानमनवे रतम्।

समृद्धानि विनश्यन्ति राष्ट्राणि नगराणि च।।५१।।

स्मरण रख, अनीति-पथ का अनुसरण करने वाले अजितेन्द्रिय राजा के कारण धन-धान्य से समृद्ध नगर और राष्ट्र नष्ट-भ्रष्ट हो जाते हैं।

कर्मफल अनिवार्य

ऐश्वर्ये वा सुविस्तीर्णे व्यसने वा सुदारुणे।

रज्ज्वेव पुरुषं बद्ध्वा कृतान्तः परिकर्षति।।५२।।

मनुष्य चाहे महान् ऐश्वर्य का उपभोग करता हो अथवा महादारुण दुःख भोगता हो- दोनों अवस्थाओं में कर्मफल -प्रदाता दैव, मनुष्य को गले में रस्सी बाँधकर अपनी ओर खींचता रहता है।

युद्धकाण्ड

संसार में तीन प्रकार के मनुष्य

त्रिविधा पुरुषा लोके उत्तमाधममध्यमाः।

तेषां तु समवेतानां गुणदोषौ वदाम्यहम्।।५३।।

संसार में उत्तम, मध्यम और अधम तीन प्रकार के मनुष्य हुआ करते हैं। मैं उन तीनों के गुण-दोष बतलाता हूँ।

मन्त्रिभिर्हितसंयुक्तैः समर्थैर्मन्त्रतनिर्णये।

मित्रैर्वापि समानार्थैबान्धवैरपि वाधिकैः।।५४।।

सहितो मन्त्रयित्वा यः कर्मारम्भान् प्रवर्तयेत्।

दैवे च कुरुते यत्नं तमाहुः पुरुषोत्तमम्।।५५।।

जो मनुष्य हितैषी और परामर्श देने की योग्यता रखने वालों अथवा अपने समान सुख-दुःख भोगने वाले मित्रों अथवा भाई-बन्दों अथवा अपने से अधिक योग्य व्यक्तियों के साथ विचार-विमर्श कर कार्य का आरम्भ करता है और परमात्मा की सहायता पाने के लिए पुरुषार्थ करता है ऐसे पुरुष को उत्तम पुरुष कहते हैं।

एकोऽर्थं विमृशेदेको धर्मे प्रकुरुते मनः।

एकः कार्याणि कुरुते तमाहुर्मध्यमं नरम्।।५६।।

जो मनुष्य अकेला ही प्रस्तुत विषय के ऊँच-नीच पर विचार कर और धर्म का आश्रय लेकर अकेला ही कार्यारम्भ कर देता है वह मध्यम पुरुष कहलाता है।

गुणदोषोवनिश्चित्य त्यक्त्वा धर्मव्यपाश्रयम्।

करिष्यामीति यः कार्यमुपेक्षेत्स नराधमः।।५७।।

जो मनुष्य गुण-दोषों का विचार किय बिना और धर्म का सहारा त्यागकर तथा 'मैं अकेला ही इस कार्य को कर लूँगा' - ऐसा निश्चय करके कार्यारम्भ कर दे और

फिर उसकी उपेक्षा कर, कार्य को बीच में ही छोड़ दे - वह पुरुष अधम है।

राजनीति में वैध

अप्युपायैस्त्रिभिस्तात योऽर्थः प्राप्तुं न शक्यते।

तस्य विक्रमकालांस्तान् युक्तानाहुर्मनीषिणः।।५८।।

हे तात ! नीति-विशारद लोगों का कथन है कि जहाँ साम, दान और भेद- इन तीन उपायों से कार्य न चले वहाँ पराक्रम प्रदर्शित करना चाहिए।

प्रमत्तेष्वभियुक्तेषु दैवेन प्रहतेषु च।

विक्रमास्तात सिध्यन्ति परीक्ष्य विधिना कृताः।।५६।।

हे तात ! जो प्रमत्त-प्रमादी अथवा असावधान हैं, दूसरे शत्रुओं के साथ उलझे हुए हैं, तथा जो महामारी आदि देवी प्रकोपों से सताये हुए हैं- ऐसे लोगों पर ही सोच-विचार कर, नीतिपूर्वक बल प्रदर्शित करने से कार्य सिद्ध हो सकता है।

परस्त्री गमन

अयशस्यमनायुष्यं परदाराभिमर्शनम्।

अर्थक्षयकरं घोरं पापस्य च पुनर्भवम्।।६०।।

पर-स्त्री-प्रसंग कीर्ति का नाशक है, आयु को क्षीण करने वाला है, धन को नष्ट करने वाला है और पाप का प्रवर्तक है।

शत्रु का मित्र

वसेत्सह सपत्नेन क्रुद्धे नाशी विषेणवा।

न तु मित्र प्रवादेन संवसेच्छत्रु सेविना।।६१।।

भले ही मनुष्य शत्रु अथवा विषधर के साथ रहे किन्तु शत्रु के मित्र के पास कभी न रहे।

शान्त रहने से यश नहीं प्राप्त होता

न साम्ना शक्यते कीर्तिर्न साम्ना शक्यते यशः।

प्राप्तुं लक्ष्मण लोकेऽस्मिञ्जयो वा रणमूर्धनि।।६२।।

हे लक्ष्मण ! शान्ति से यश एवं कीर्ति प्राप्त नहीं होती और न शान्त रहने से युद्ध में विजय प्राप्त होती है अतः -

सन्धि किस स्थिति में

हीयमानेन कर्तव्यो राज्ञा सन्धिः समेन च।

न शत्रुमवमन्येत ज्यायान् कुर्वीत विग्रहम्।।६३।।

राजा को उचित है कि जब वह अपने को शत्रु से दुर्बल या समान बल समझे तब शत्रु से सन्धि कर ले। शत्रु कैसा भी हो उसे तुच्छ कभी न समझना चाहिए। हाँ, यदि स्वयं शत्रु से बलवान् हो तो युद्ध करना चाहिए।

सत्य धर्म-निष्ठ की अकाल मृत्यु नहीं होती

सत्यधर्माभिरक्तानां नास्ति मृत्युकृतं भयम्।

तस्मादाश्वासयात्मानं बलं चाश्वासय स्वकम्।।६४।।

सत्य धर्म में स्थित मनुष्यों को अकालमृत्यु का भय नहीं होता। अतः तुम स्वय धैर्य धारण करो और अपने सैनिकों को भी धीरज बंधाओ।

कुम्भकर्ण द्वारा रावण को नीति वर्णन

आचरण में न लाने वाले का धर्म ज्ञान व्यर्थ।

त्रिषु चैतेषु यच्छ्रेष्ठं श्रुत्वा तन्नावबुध्यते।

राजा वा राजमात्रो वा व्यर्थ तस्य बहुश्रुतम्।।६५।।

धर्म, अर्थ और काम - इन तीनों में जो श्रेष्ठ है (अर्थात धर्म) उसको जानकर भी जो धर्मानुसार आचरण नहीं करता वह चाहे राजा हो अथवा राजा के सदृश कोई बड़ा आदमी हो- उसका बहुत सा शास्त्र सुनना व्यर्थ ही है।

उपप्रदानं सान्त्वं वा भेदं काले च विक्रमम्।

योगं च रक्षसां श्रेष्ठ ताबुभौ च नयानयौ।।६६।।

कालेधर्मार्थकामान्यः सम्मन्त्र्य सचिवैः सह।

निषेवेतात्मवाँल्लोके न स व्यसनमाप्नुयात्।।६७।।

हे राजन ! समय के अनुसार शत्रु से सन्धि, जाकर उसे द्रव्यदेना, वैरी के साथ समीचीन भाषण(साम), शत्रु के मित्रों में फूट डालना (भेद) और शत्रु को दण्ड देना तथा पहले कहे गये पाँच योग और दोनों नीति अनीति तथा धर्म, अर्थ और काम सम्बन्धी कार्यों की मन्त्रणा मन्त्रियों के साथ जो जितेन्द्रिय राजा उचित समय पर किया करता है उसे संसार में कभी दुःख प्राप्त नहीं होता।

हितानुबन्धमालोच्य कार्याकार्यमिहात्मनः।

राजा सहार्थतत्त्वज्ञैः सचिवैः स हि जीवति।।६८।।

राजा को उचित है कि अर्थतत्त्वज्ञ (सब बातों में ऊँच नीच को समझने वाले) मन्त्रियों से अपने हित के कार्यो के सम्बन्ध में कर्तव्याकर्तव्य का विचार कर निश्चय करे। जो राजा ऐसा करता है वही इस संसार में टिक सकता है।

यो हि शत्रुमभिज्ञाय नात्मानमभिरक्षति।

अवाप्नोति हि सोऽनर्थान् स्थानाच्च व्यवरोप्यते।।६९।।

जो राजा शत्रु को तुच्छ समझकर अपनी रक्षा नहीं करता वह बड़े भारी अनर्थ को प्राप्त होकर स्थानभ्रष्ट (राज्यच्युत) हो जाता है।

किसको त्याग देना चाहिये

हिंसापरस्वहरणे परदाराभिमर्शनम्।।

त्याज्यमाहुर्दुराचारं वेश्म प्रज्वलितं यथा।। ७०।।

जो हिंसक हो, पर धन छीनने वाला हो और पर-स्त्री का अपहरण करने वाला हो- ऐसे दुराचारी को जलते हुए घर की भांति त्याग देना ही नीतिज्ञों का मत है।

परस्वानां च हरणं परदाराभिमर्शनम्।।

सुहृदामतिशङ्का च त्रयो दोषाः क्षयावहाः।। ७१।।

दूसरों का धन छीनना, पराई स्त्रियों पर हाथ डालना और मित्रों के ऊपर सन्देह करना - ये तीनों पापकर्म नाश करने वाले हैं।

समराङ्गण की मृत्यु प्रसंशनीय

नैवं विनष्टाः शोच्यते क्षत्रधर्ममवस्थिताः।

वृद्धिमाशंसमाना ये निपतन्ति रणाजिरे।।७२।।

जो लोग क्षात्रधर्म में स्थित रहते हुए अपनी विजय की आकांक्षा रखते हुए समरभूमि में प्राण त्यागते हैं- वे साधारण जनों की भांति शोक करने के योग्य नहीं होते।

इयं हि पूर्वैः सन्दिष्ठा गतिः क्षत्रियसम्मता।

क्षत्रिये निहतः संख्ये न शोच्य इति निश्चयः।। ७३।।

(पीठ न दिखाकर) समर में मारे जाने की प्रशंसा मनु-आदि भी करते चले आये हैं और वीर लोग भी ऐसी मृत्यु की प्रशंसा करते हैं जो वीर युद्ध में मारा जाता है और वह निश्चय ही शोक करने योग्य नहीं होता।

माता सीता के प्रति मन्दोदरी के भाव

वसुधायाश्च वसुधां श्रियाः श्रीं भर्तृवत्सलाम्।

पतिव्रतायास्तपसा नूनं दग्धोऽसि मे प्रभो।।७४।।

सीता पृथिवी से भी बढ़कर क्षमाशील, समस्त सम्पदाओं की अधिष्ठात्री देवी और पतिव्रता है। हे स्वामिन ! निश्चय ही आप उस पतिव्रता की तप रुप अग्नि से भस्म हो गये।

सर्वथा सर्वभूतानां नास्ति मृत्युरक्षणः।

तव तावदेयं मृत्युर्मैथिलीकृतलक्षणः।।७५।।

संसार में बिना कारण के कोई भी नहीं मरता तो यह सीता ही आपकी मृत्यु का कारण बनी है।

इति

बाल्मीकीय रामायण

सुभाषित



श्री नाथूराम गुप्त द्वारा लिखित ग्रन्थ

१. **वेद और जीवन** (चारों वेदों के प्रमुख ११६२ मन्त्र भाषार्थ एवम् विवेचना सहित) पृष्ठ संख्या ४६० मूल्य २०/-, सजिल्द २२/-

२. **उपनिषद नवनीत** (ईश, कठ, केन, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरेय, श्वेताश्वर, छान्दोग्य एवम् वृहदारण्यकोपनिषद का विवेचनात्मक परिचय एवम् संक्षिप्त हिन्दी भाष्य) पृष्ठ संख्या १२८ मूल्य १५/-

३. **आरोग्य साधन** (१. पंचतत्वों द्वारा आरोग्य एवम् उपचार, २. यज्ञ द्वारा आरोग्य एवम् उपचार व्याधानुसार सामग्री तथा समिधाओं का वर्गीकरण)

४. **वेद वाणी दर्शन दर्पण खण्ड १** (चारों वेदों से सुभाषित भाषार्थ सहित एवम् भाषा व्याकरण शब्द कोष के आधार पर विवेचना) पृष्ठ संख्या ८२ मूल्य १०/-

५. **उपनिषद सन्देश दर्शन दर्पण खण्ड २** (एकादश उपनिषदों के प्रमुख अंश भाषार्थ सहित, उपनिषदों पर मनीषियों के विचार एवम् परिचयात्मक विवेचन) पृष्ठ संख्या ७३ मूल्य १५/-

६. **गीता जीवन दर्शन दर्शन दर्पण खण्ड ३** (मानव जीवन हेतु दिशादर्शक सूत्र भाषार्थ व्याख्या सहित एवम् श्रीमद्भग्वद् गीता पर विश्व के मनीषियों के विचार) पृष्ठ सं. ६६ मूल्य ८/-

७. **श्री बाल्मीकीय रामायण दिग्दर्शन दर्शन दर्पण खण्ड ४** (श्री बाल्मीकीय रामायण के प्रमुख कथानक एवम् सुभाषित भाषार्थ सहित) पृष्ठसं ४८ मूल्य ६/-

८. **नीति संक्षेप दर्शन दर्पण खण्ड ५** (विदुर नीति, कणिक नीति, भ्रातृहरि शतक, चाणक्य नीति के प्रमुख अंश भाषार्थ सहित) पृष्ठ सं५८ मूल्य ६/-

९. **दर्शन दर्पण सम्पूर्ण पांचों खण्ड** (वेदवाणी, उपनिषद सन्देश, गीता जीवन दर्शन, बाल्मीकीय रामायण तथा नीति संक्षेप) पृष्ठ सं. ३०० मूल्य ४०/-

प्रकाशक : संस्कृति प्रसार न्यास, खोया मण्डी, उरई उ. प्र. २८५००१

दूरभाष : (०५१६२) ५२०६९, ५१७२३